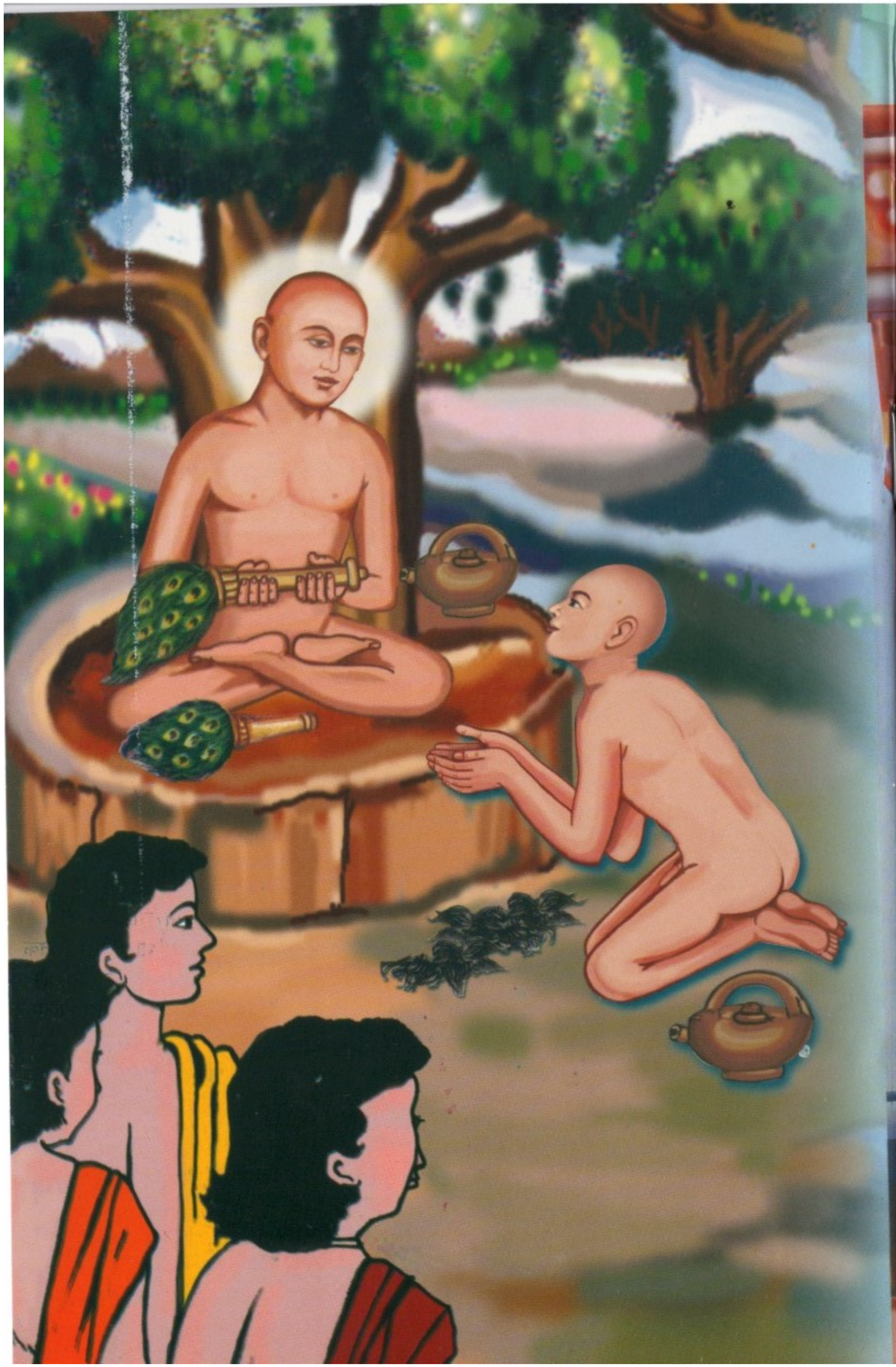

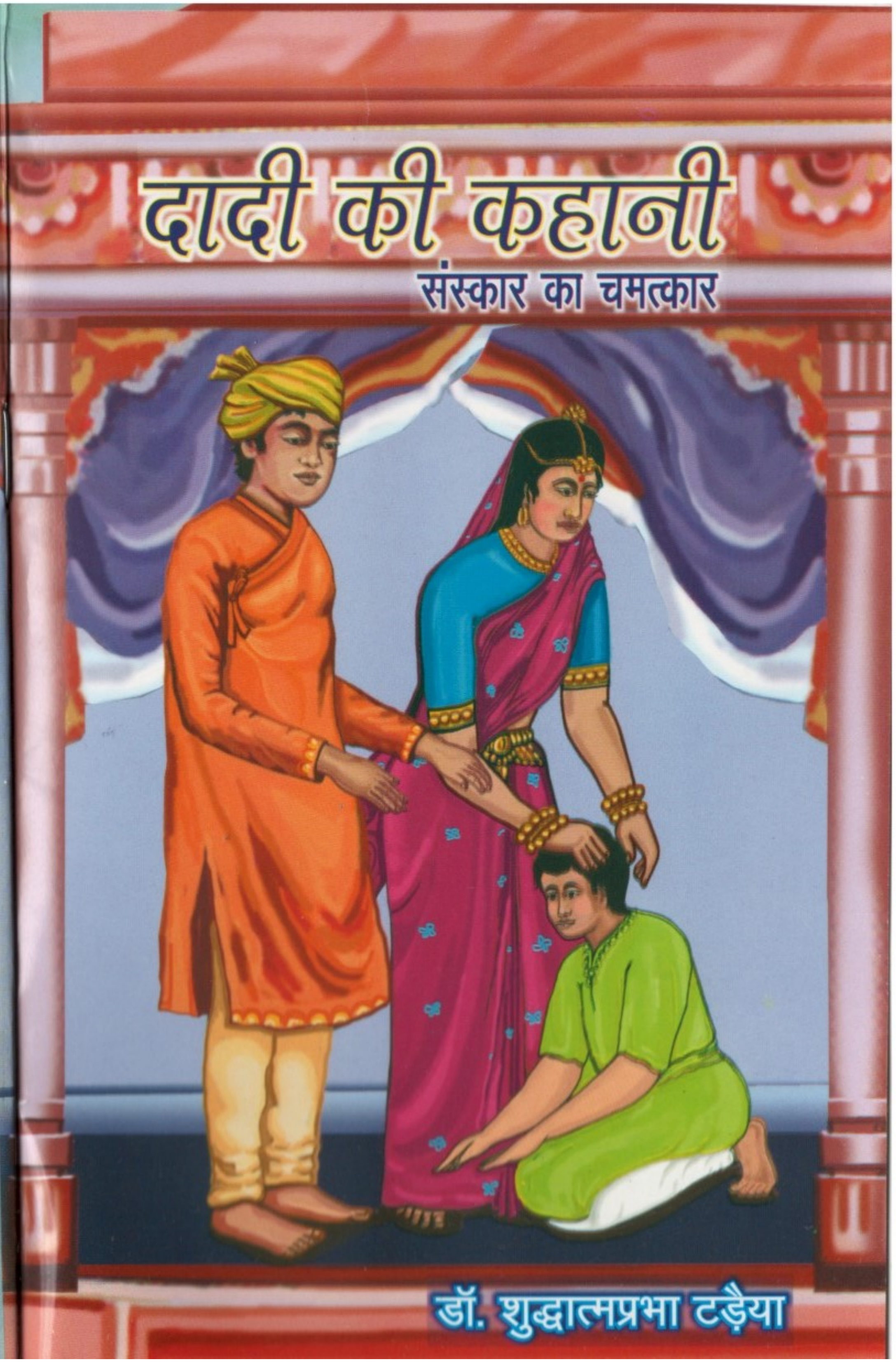
दादी की कहानी
संस्कार का चमत्कार
डॉ. शुद्धात्मप्रभा टड़ैया

•प्रथम संस्करण : ३ हजार ५००
(२९ अप्रैल, २००५)
द्वितीय संस्करण : १ हजार
(१३ अप्रैल, २०१४)
महावीर जयन्ती
योग : ४ हजार ५००

मूल्य : आठ रुपये

मुद्रक :
श्री प्रिन्टर्स
मालवीयनगर इण्डस्ट्रियल एरिया,
जयपुर - ३०२०१७

• आराध्य प्रकाशन, मुम्बई द्वारा प्रकाशित

संस्कार का चमत्कार

: लेखिका :

डॉ श्रीमती शुद्धात्मप्रभा टडैया
बी.ए.ऑनर्स (स्वर्ण पदक प्राप्त)
एम.ए.,पी.एच.डी.
फोन : 09022778900
मुंबई,(महाराष्ट्र)

प्रकाशक :

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015
फोन : 0141-2707458, 2705581
E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

प्रकाशकीय

संस्कार का चमत्कार, आराध्य प्रकाशन; टोडरमल स्मारक, ट्रस्ट जयपुर की ओर से प्रकाशित नवीनतम कृति है। मानवीय मनोविज्ञान से परिचित डॉ शुद्धात्मप्रभा टड़ैया ने इसमें जैनाचार्य कुन्दकुन्द के बारे में प्रचलित घटनाओं के माध्यम से मानवीय मनोभावों का चित्रण करते हुए अध्यात्म का पुट सहजता से दिया है।

आज के आधुनिक परिवेश में मासुम बच्चों में हिंसक इमेजों द्वारा सहजता से हो रहा है। वाशिंगटन विश्वविध्यालय के अर्थशास्त्री फ्रेंडरिक जिमरसेन और ब्रिटेन की बर्मिंघम युनिवर्सिटी के रिर्सचरों ने चेतावनी दी है कि - एक घंटे के प्रोग्राम में मात्र चार मिनिट के हिंसक सीन भी बच्चों को हिंसक बनाने के लिए काफी हैं। अत: पेरेंट्स को इस मामले में वैसी ही सावधानी बरतनी चाहिए, जैसी वे घर में पड़ी दवाओं या खतरनाक रसायनों के लिए बरतते हैं।

बालमन कोमल होता है, उसमें बचपन में जो संस्कार डाले जाते हैं, वे अमिट छाप छोड़ते हैं। आज के इस वैज्ञानिक युग में बच्चों के मनोरंजन के जो नए-नए साधन विकसित हुए हैं, वे हिंसाप्रधान हैं। T.V. में वह पिक्चर देखे या कार्टून - सभी जगह उसे बंदूक चलती नजर आती है। उदाहरण के तौर पर बच्चा यदि वीडियो गेम खेलता है, तो उसमें मारना- काटना ही सीखता है। जो जितना अधिक आदमियों, जानवरों को मारता है, वह विजेता होता है और इस तरह बच्चा अनजाने में ही हिंसा में आनन्द मनाने लगता है। खिलौने के तौर पर वह बंदूक ही खरीदना चाहता है। बच्चों की बात जाने दो, हम माँ-बाप भी बड़े गौरव से लोगों से कहते हैं — 'मेरे बेटे को गुडियों का खेल पसंद नहीं, वह बंदूकों से खेलना पसंद करता है, हर नई मॉडल की गन उसके पास है। इस प्रकार बच्चों में बचपन से ही हिंसक संस्कार समा जाते हैं और हमें पता भी नहीं चलता'; किन्तु 'ज्ञान' एक ऐसा साधन है, जिसके द्वारा समस्त बुराईयों से बचा जा सकता है। सही और सच्चा ज्ञान समय पर देना ही बुराईयों से बचने का एकमात्र उपाय है।

उक्त तथ्य को ध्यान में रखकर ही हम अपने प्रकाशन द्वारा बालकों में अहिंसक आध्यात्मिक संस्कारों द्वारा पोजेटिव थिंकिंग का ऐसा कवच तैयार करना चाहते हैं, जो हमारे बच्चों में नेगेटिव थिंकिंग और हिंसक संस्कारों के प्रवेश पर रोक लगा सके। हमारे बच्चों का भविष्य उज्ज्वल और जीवन सुखी हो इसी भावना से विराम लेता हूँ।

प्रकाशन मंत्री
– ब्र. यशपाल जैन
टोडरमल स्मारक, ट्रस्ट जयपुर

संस्कार का चमत्कार

(दादी को घेरकर बच्चे दीवानखाने (ड्राइंगरूम) में बैठे हैं)

बच्चे : दादी माँ! दादी माँ!! कहानी सुनाओ ना।

दादी : एक था राजा..............।

चेतना : (बीच में ही) दादी, राजा-रानी की कहानी नहीं। आज तो उस बच्चे की कहानी सुनाओ, जिसने अपने जन्मदिन के दिन ही दीक्षा ली हो, जिसे जन्मदिन के दिन ही आचार्य पद मिला हो।

दादी : कल............।

चेतना : (बीच में ही) कल नहीं दादी! आज ही। पाठशाला में पंडितजी ने यही होमवर्क दिया है।

ज्ञान : दादी! मुझे तो वसंत- पंचमी पर कुछ लिखने को कहा हैं।

विवेक : मुझे तो एक महापुरुष की जीवनी लिखनी है।

संस्कृति : दादी! किसी भी बच्चे के जीवन में संस्कार का बहुत महत्त्व होता है। बचपन में मिले संस्कार ही उसके भावी जीवन की आधारशिला होते हैं। अत: **संस्कार का चमत्कार** बताने वाली कोई कहानी सबसे पहले सुनाइए।

आराधना : दादी, मंगलाचरण में जिन आचार्य के नाम को याद किया जाता है, मुझे तो उन पर ही लिखना है। आप जरा मंगलाचरण सुनाइए ना।

दादी : मंगलं भगवान वीरो मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं कुन्दकुन्दाद्यो जैन धर्मोऽस्तु मंगलं॥

आराधना : हाँ, हाँ दादी! कुन्दकुन्दाचार्य की जीवनगाथा ही बताइए!

दादी : तीर्थंकर महावीर और गौतमगणधर के बाद जिनका नाम बड़े सम्मान से लिया जाता है-ऐसे महामुनि आ. कुन्दकुन्द की जीवन कहानी मैं तुम्हें सुना।

चेतना : (बीच में) दादी, सबसे पहले मैंने कहा। पहले मेरी कहानी....

ज्ञान : मैं छोटा हूँ। पहले मेरी..........

(इस प्रकार सब आपस में पहले मेरी, पहले मेरी लड़ते रहते हैं।)

दादी : (मन में) आज ये सब कहानी नहीं, अपनी - अपनी विशिष्ट कहानी सुनना चाहते हैं। आज इनका चित्त चंचल हैं। **चंचल चित्त में दिया गया उपदेश कार्यकारी नहीं।** यद्यपि इन सबके प्रश्न अलग-अलग हैं; पर कहानी एक ही है तथापि मुझे पहले इनके मन को संतुष्ट करना होगा। यदि इन्हें ऐसा लगा कि मैं किसी एक बच्चे की कहानी कह रही हूँ, तो दूसरा ध्यान से सुनेगा ही

नहीं । मन की प्रवृति ही ऐसी है यदि वह किसी एक विषय के चिंतन में उलझा हो, किसी टेंशन में हो तो अन्य बात पर उसका ध्यान ही नहीं जाता । चलो, सबसे पहले इनका ध्यान अपनी ओर केन्द्रित करूँ, इनका चित्त एकाग्र करूँ, इन सबका उपयोग कहानी की ओर लगाऊँ । (प्रकट में) देखो बच्चों! मैं एक ऐसी कहानी सुनाती हूँ, जिसमें तुम सब बच्चों के प्रश्नों का उत्तर मिल जाएगा । सुनाऊँ ?

सभी : हाँ, हाँ. सुनाओ ।

दादी : ध्यान से सुनोगे? बीच में नहीं बोलोगे?

सभी : हाँ, हाँ, हाँ । नहीं बोलेंगे ।

दादी : मैं बाद में वही प्रश्न पूछूँगी, जवाब दोगे?

सभी : हाँ, हाँ, हाँ ।

दादी : एक सेठ थे और एक सेठानी । सेठ का नाम था- करमण्डु और सेठानी का नाम था - श्रीमती । दोनों ही धार्मिक प्रवृत्ति के थे । प्रात: उठकर देवदर्शन, पूजा, प्रवचन,स्वाध्याय आदि उनकी दैनिक चर्या में शामिल था । एक दिन की बात है सेठानी अपनी पड़ोसन प्रीति के साथ मंदिर से घर लौट रहीं थी, तभी प्रीति ने कहा —

प्रीति : बहनजी! बुरा न मानो तो एक बात कहूँ!

श्रीमती : अजी ! एक क्या, चार बात कहो? इसमें बुरा मानने की क्या बात है?

प्रीति : आपके पास धन-संपत्ति, गाय-भैंस, नौकर-चाकर सभी सुख हैं, पर संतान..........।

श्रीमती : (बीच में ही) मतिवरन है ना! वह हमारे बेटे जैसा ही है । पूरा ध्यान रखता है हमारा ।

प्रीति : अजी, पराया खून पराया ही होता है, अपना खून अपना । वंश बेटे से चलता है, बेटे जैसे से नहीं । कहाँ वह अनपढ़, गँवार ग्वाला और कहाँ आप? उसकी आपकी क्या तुलना? वह नौकर है, उसे नौकर ही रहने दो । पाँव की जूती को सिर पर नहीं रखा जाता । सुनो बहना! पास के गाँव में एक देवी प्रसिद्ध हैं, उनको माथा टेकने से अनेकों की अभिलाषा पूरी हुई है। तुम भी एक बार............।

श्रीमती : ऐसा कैसे संभव है? यह सब तो अपने ही पूर्वकृत कर्मों का फल है ।

प्रीति : एक बार जाने में क्या नुकसान है? संतान हो गई तो अच्छा है, न हुई तो तुम्हारा क्या बिगड़ जाएगा ।

नीति : प्रीति! ऐसा करने से हमारी मान्यता बिगड़ती है । मिथ्यात्व पुष्ट होता है, अनंत संसार बढ़ता है ।

प्रीति : नीति! तुम अपनी धर्म की बातें अपने पास रखो! तुम क्या जानो बांझपन का दु:ख । बहना! तुम इसकी बातों में न आना । एक बार जरूर जाकर आना ।

दादी : सेठानी को प्रीति की बात चुभ जाती है और वह कुछ सोचती हुई घर चली जाती है ।

दृश्यपरिवर्तन

(सेठजी स्वाध्याय कक्ष में स्वाध्याय कर रहे है, सेठानी चुपचाप आकर खड़ी हो जाती है । थोड़ी देर बाद)

सेठजी : क्या बात है? आज इस समय.......। कुछ कहना है क्या?

श्रीमती : हाँ! हाँ!! वो पड़ोसन..................(चुप हो जाती है)

सेठजी : संकोच क्यों कर रही हो, कहो ना ।

श्रीमती : बाजु वाले गाँव में एक देवी माता है, जिनके आशीर्वाद से बहुत लोगों की आरजू पूरी हुई है । शायद हमें भी उनके दर्शन से संतान का सुख प्राप्त हो जाए ।

सेठजी : तुम प्रतिदिन प्रवचन सुनती हो । क्या तुम्हें याद नहीं **जिस द्रव्य का, जिस क्षेत्र में, जिस रूप में, जिस काल में होना निश्चित है, वह उसी द्रव्य में, उसी क्षेत्र में, उसी रूप में, उसी काल में होगा ।**

श्रीमती : सुना है, सब सुना है । किन्तु जिस प्रकार घर की बातें, सांसारिक बातें मंदिर में नहीं करनी चाहिए, उसी प्रकार मंदिर की बातें सांसारिक कार्यों में लागू नहीं होती । संसार तो संसार के हिसाब से ही चलेगा ना ।

सेठजी : (मन में) दुनिया द्वारा दिए गए बांझत्व के तानों से तंग यह भटक गई है । मिथ्या उपायों में उलझी यह अभी कुछ सुनने - समझने के मूढ़ में भी नहीं है । पहले तो इसे तत्त्वज्ञान कराना होगा । प्रवचन में इसका उपयोग स्थिर नहीं रह पाता, भटक जाता है, घर पर तत्त्वचर्चा कर इसकी मिथ्या मान्यताओं को दूर करना होगा । पर पहले इसके चित्त को स्थिर कर दूँ । (प्रकट में) चलेंगे, चलेंगे । कुछ दिन बाद चलेंगे । अभी बैठो, आओ मेरे साथ स्वाध्याय करो ।

श्रीमती : (प्रसन्नता की मुद्रा में) करूँगी,जरूर करूँगी आपके साथ स्वाध्याय,क्योंकि

प्रवचन में महाराज जी की बड़ी-बड़ी बातें मुझे समझ में नहीं आतीं। सब बातें एक बार सुनने में याद भी नहीं रहती । आपके साथ चर्चा करूँगी तो कुछ याद रहेगा, समझ आएगा ।

सेठजी : पूँछो, क्या पूँछना है?

श्रीमती : अभी नहीं, अभी रसोई बनाना है । रोज रात में चर्चा करेंगे ।

दादी : इसके बाद सेठ- सेठानी प्रतिदिन रात्रि में तत्त्वचर्चा करते । मतिवरन भी उनके पास आकर बैठ जाता और उनकी बातें ध्यान से सुनता।

दृश्यपरिवर्तन

दादी : एक दिन की बात है मतिवरन अपने पशुओं को लेकर जंगल की तरफ जा रहा था, तभी सभी साथी उसे रोकते हुए कहते हैं —

एक ग्वाला : मतिवरन उस तरफ न जाओ । रात में जंगल में बड़ी भयंकर आग लगी है, सब कुछ जलकर भस्म हो गया है ।

मतिवरन : हैं ! क्या कहा? सब कुछ जल गया । कल तो वहाँ हमारे सेठजी के गुरूजी नग्न महाराज विराजमान थे, उनका क्या हुआ?

दूसरा ग्वाला: हमें नहीं पता ।

मतिवरन : तो फिर मैं जाकर देखता हूँ ।

दादी : थोड़ी दूर जाकर वह देखता है कि एक जगह हरियाली है, वह उसी तरफ पशुओं को लेकर जाने लगता है, तभी तीसरा ग्वाला कहता है -

तीसरा ग्वाला: मतिवरन वहाँ न जाओ । वहाँ कुछ भूत-प्रेत की माया है, तुम्हारा अनिष्ट हो जाएगा ।

मतिवरन : कुछ भी हो, मैं तो जा रहा हूँ ।

नेहा : फिर क्या हुआ? दादी!

दादी : वह वहाँ चला जाता है । वहाँ जाकर देखता है कि एक पेटी रखी हुई है । वह पेटी खोलता है और सोचता है —

मतिवरन : अरे यह तो जादुई शास्तर हैं । इनके कारण ही यह जगह आग से बच गई है । यदि मैं इन्हें अपने घर पर रखूँगा तो मेरे ऊपर भी विपत्तियां नहीं आएँगी । मैं इनकी रोज पूजा भी किया करूँगा ।

दादी : वह शास्त्रों को घर में लाकर सुरक्षित जगह पर रख देता है और सेठ-सेठानी के पास चर्चा सुनने पहुँचता है ।

सेठजी : आज देर हो गई मतिवरन ।

मतिवरन : हाँ सेठजी! आज जंगल में दूर जाना पड़ा इसीलिए देर.........

सेठजी : अच्छा ठीक है, ठीक है । अभी हमारी पांचों पापों में तीसरे पाप चोरी की चर्चा चल रही है । हिंसा - झूँठ के बारे में मैं तुम्हें बाद में बता दूँगा।

मतिवरन : जैसा आप ठीक समझें ।

सेठजी : किसी की पड़ी हुई, भूली हुई, रखी हुई वस्तु को स्वयं उठा लेना या उठाकर किसी अन्य को दे देना द्रव्य चोरी है और.............

मतिवरन : (बीच में ही) किसी की भूली हुई चीज उठा लेना चोरी कैसे है? कोई रखकर भूल गया ओर कहीं चला गया हो तो भी उस वस्तु को उठा लेना चोरी है क्या?

सेठजी : हाँ बेटा! वह भी चोरी ही है । क्योंकि जो व्यक्ति अपनी वस्तु भूल जाता है, वह उस वस्तु को याद आने पर, वहीं ढूँढने आता है; वस्तु न मिलने पर उसे दुःख होता है, अतः..........

मतिवरन : (अपनी धुन में बीच में ही) मैं भी आज आपके गुरु मुनि महाराज की रखी हुई टीन की पेटी ले आया हूँ । तो चोरी हुई क्या?

सेठजी : नग्न मुनिराज कुछ सामान नहीं रखते । वह पेटी किसी दूसरे की होगी, उसे खोजकर दे देना ।

मतिवरन : किन्तु कल वहाँ महाराज ही थे, वह उनकी ही..............

सेठजी : बहस मत करो! कहा ना कि महाराज पीछी-कमण्डलु के अतिरिक्त कुछ भी परिग्रह नहीं रखते । जाओ, अभी सो जाओ ।

(मतिवरन अपने कमरे में चला जाता है और लेटते हुए सोचता है —)

मतिवरन : (मन में) मुझे तो वह शास्तर महाराज के ही लगते हैं । जब महाराज भोजन के लिए नगर में आएँगें, तब उन्हें ये शास्तर वापिस दे दूँगा। यदि उनके न होंगे तो वे स्वयं ही न लेंगें, तो दूसरे को खोजूँगा।(सो जाता है)

दृश्यपरिवर्तन

(कुछ दिनों पश्चात्)

मतिवरन : सेठजी! बहुत दिनों से गुरु महाराज का अपने यहाँ भोजन नहीं हुआ ।

सेठजी : बेटा! मुनिराज के भोजन को 'आहार लेना' कहते हैं । आज एक महाराज नगर में पधारे हैं । अपना सौभाग्य हुआ तो अपने यहाँ उनका आहार होगा ।

मतिवरन : मैं भी उनके दर्शन करना चाहता हूँ, आहार देखना चाहता हूँ ।

सेठजी : ठीक है, तूँ रुक जा! जंगल थोड़ी देर बाद चला जाना ।

दादी : मुनिराज का आहार सेठजी के घर पर ही होता है । आहार के पश्चात् मतिवरन वे ग्रंथ मुनिराज को भेंट देता है । महाराज आर्शीवाद देकर कहते है -

महाराज : यह बालक निकट भव्य है । तत्त्वज्ञान के प्रचार-प्रसार द्वारा इसका यश चारों दिशाओं में फैलेगा, वणिक कुल को पवित्र करेगा ।

एक पड़ोसन: महाराज! इन सेठ-सेठानी की मनोकामना कब पूरी होगी?

मुनिराज : भविष्य में इस मतिवरन द्वारा ही दोनों की मनोकामना पूरी होगी। (इतना कहकर महाराज चले जाते हैं । पड़ोसी हक्के-बक्के रह जाते हैं)

सेठानी : (मन में) सही कहा है महाराज जी ने! मैं मतिवरन को पुत्रवत् ही तो चाहती हूँ ।

दादी : 'वणिक कुल को पवित्र करेगा', 'तत्त्वज्ञान का प्रचार-प्रसार करेगा'-महाराज के यह वचन सेठजी के मन में घूमने लगे । वे महाराज के कथन का भाव समझने का प्रयास करने लगे । उन्हें विचारमग्न देखकर पडोसी कहते हैं—

पड़ोसी : क्या सोचने लगे सेठजी? हम चलते हैं ।

सेठजी : थोड़ी देर और रुको, भोजन करके ही जाना ।

पड़ोसी : नहीं, अभी हम चलते हैं ।

(सभी चले जाते हैं, मतिवरन भी जंगल जाता है । रास्ते में चलते हुए)

एक पड़ोसी : सुना तुमने! यह अनपढ़, गँवार मतिवरन तो सेठजी की लाखों की संपत्ति का वारिस हो गया ।

दूसरा : संसार की कैसी विचित्रता है? सेठजी के पास सब कुछ है, पर संभालने वाला नहीं, वारिस नहीं ।

तीसरा : हाँ! अब बेचारे सेठजी को इस ग्वाले को ही पुत्र बनाना पड़ेगा।

चौथा : सेठजी इतने धर्मात्मा और ऐसा पाप का उदय!

पांचवा : सब पूर्व कर्मों का फल है, अपने किए कर्म सबको भोगने पड़ते हैं।

दूसरा : (बाजु में चलते हुए मतिवरन को सुनाकर जोर से) इन छोटे लोगों का क्या भरोसा? कहीं संपत्ति के चक्कर में सेठजी का ही काम तमाम न कर दे ।

उसकी पत्नी : धीरे बोलो जी । वह सुन लेगा ।

दूसरा : अरे सुनता है तो सुने! कौन सा गलत कह रहा हूँ ।

मतिवरन : (मन में) इन लोगों का मन कितना गंदा है । जवाब दूँ क्या? (सोचकर) नहीं, नहीं । इनसे उलझने से फायदा नहीं, बात सेठजी सुनेंगे तो उन्हें दुःख

होगा । इन लोगों की बातों से मैं व्यर्थ ही दुःखी हो रहा हूँ । मेरे स्वामी तो मेरे पिता तुल्य है । जब मैं उनकी पुत्रवत् सेवा करूँगा, तो अपने आप इन सबके मुँह बंद हो जाएँगे । (सामने देखकर प्रगट में) अरे! सब जानवर दूर निकल गए मुझे उनके पास जल्दी पहुंचना चाहिए ।

(दौड़ लगाता है)

तीसरा : देखो! अपनी बात सुनकर कैसे दुम दबाकर भाग गया । चलो, हम भी चलें ।

(सभी चले जाते हैं)

दृश्यपरिवर्तन

(कुछ दिन पश्चात्)

सेठजी : आज आप चिंतित नजर आ रही हैं ।

सेठानी : जब से महाराज जी ने आर्शीवाद दिया है, तब से मतिवरन का व्यवहार बदल गया है । सुबह जल्दी चला जाता है, रात में तत्त्वचर्चा में भी नहीं आता । दूर-दूर सा रहने लगा है ।

सेठजी : दुनिया की बातें उसके कान में भी पहुंची होगी । उसका दिल दुःखा होगा ।

सेठानी : हां कितने निम्नस्तर की बातें करते हैं लोग! अब हमें क्या करना चाहिए? वह विद्वान कैसे बनेगा? तत्त्वज्ञान का प्रचार-प्रसार कैसे करेगा?

(मतिवरन आता है । अपना नाम सुनकर बाहर ही खड़ा रह जाता है)

सेठजी : दुनिया का कुछ भरोसा नहीं । उन्हें बातें बनाने से मतलब है । जो आज उसके लिए कह रहे हैं, कल हमारे लिए भी कह सकते हैं ।

सेठानी : क्या मतलब?

सेठजी : कल उसे कुछ हो गया तो हमारे ऊपर हत्या का ....

सेठानी : (बीच में ही) नहीं, नहीं, ऐसा कुछ नहीं होगा । दीर्घायु है हमारा मतिवरन । हमसे पहले वो नहीं जा सकता । हमें वही कंधा देगा ।

मतिवरन : (मन में) पुत्रवत् चाहती हैं सेठानी मुझे । मैं उनके सेवा-सुश्रुषा पुत्र से भी बढ़कर करूँगा ।

सेठजी : (मन में) यह महाराज का कथन का मतलब नहीं समझी । वणिक कुल में जन्म लेगा, भविष्य में तत्त्व प्रचार-प्रसार करेगा -- यह सभी बातें मतिवरन के अल्पायु होने की ओर संकेत कर रही हैं । सेठानी उसका वियोग बर्दाश्त नहीं कर पाएँगी । फिलहाल उसे सेठानी की नजरों से दूर

कहीं भेजना होगा । दूसरी बात - मतिवरन के निगाहों से दूर हो जाने पर जनता भी उसे भूल जाएगी, अन्यथा ग्वालापने का भूत अगले भव में भी इसका पीछा नहीं छोड़ेगा । (कुछ सोचकर प्रगट में) श्रीमती जी! तो हम अब आपके इस पुत्र को विद्याध्ययन के लिए योग्य गुरु के पास भेजने की व्यवस्था करें?

सेठानी : हाँ, हाँ । क्यों नहीं? हमारा पुत्र विद्वान बनेगा, अवश्य बनेगा। उसके लिए आप जो उचित समझें, करें ।

सेठजी : मतिवरन तो अब तक आया नहीं । चलो अपनी तत्त्वचर्चा करते हैं।

दादी : इस प्रकार दोनों तत्त्वचर्चा करने लगते हैं, मतिवरन जाकर सो जाता है । थोड़े ही दिनों में यह बात पूरे गांव में फैल जाती है । एक दिन मतिवरन जब जंगल में जाता है, तो उसके साथी ग्वाला उससे व्यंगात्मक लहजे में बात करते हैं।

एक ग्वाला : (व्यंग्य से) सेठजी! पधारिए, पधारिए ।

दूसरा ग्वाला: सेठजी! अब आपको यहाँ आने की क्या जरूरत?

तीसरा ग्वाला: अब तो तेरे ठाठ-बाट हैं । सेठ का पुत्र बन गया है तूँ । सेठ की संपत्ति पर ऐश कर ऐश । उनकी चल-अचल संपत्ति का वारिस तूँ ही है अब ।

मतिवरन : (मन में) सब के मन एक से कलुषित हैं । यदि सेठजी को कुछ हुआ तो मुझ पर और मुझे कुछ हुआ तो सेठजी पर आरोप लगाकर ही दम लेंगे ये सब । मुझे सेठजी को बताए बिना ही जाना होगा । अज्ञातवास करना होगा ।

चौथा ग्वाला: किन कल्पनाओं में गुम हो गए? देखो भाई! देखो स्वप्न!! मेहनत-मजदूरी के दिन गए तुम्हारे । सेठ बनकर अपने इन साथियों को भी कभी-कभी याद कर लेना । हम पर दया-दृष्टि रखना । और कुछ न सही अपने यहाँ ग्वाला ही रख लेना । शायद कभी हमारा भी भाग्य पलट जाए ।

मतिवरन : (चौंकते हुए) क्या कहा?

दूसरा ग्वाला: अरे! यह तो अभी तक स्वप्न की दुनिया में ही खो रहा था। यह तो हमारी बातें अभी से ही नहीं सुन रहा । अच्छा बताओ, तुम क्या सोच रहे थे?

मतिवरन : मेरे सेठजी से कहना मैं गुरु के पास शिक्षा लेने जा रहा हूँ। उनके योग्य बनकर ही उनके पास आऊँगा, पुत्रधर्म निभाऊँगा । मेरे ये पशु उनके पास तक पहुँचा देना ।

तीसरा ग्वाला : अरे! यह तो बताते जाओ कि तुम कहाँ जा रहे हो ? कब लौटोगे? अपने सेठजी से मिलकर तो जाओ ।

मतिवरन : नहीं, नहीं! उनके पास जाऊँगा तो, वे रोक लेंगे । मै जा रहा हूँ । (चला जाता है)

चौथा ग्वाला : मूरख है । हाथ आई संपत्ति ठुकराकर जा रहा है । चलो, सेठजी तक खबर पहुँचा दे । (सभी चले जाते हैं)

दृश्यपरिवर्तन

दादी : मतिवरन के जाने से सेठानी आरंभ में कुछ दिन बहुत दु:खी हुई । पर सेठजी के समझाने पर उन्होंने अपना पूरा समय एवं शक्ति धार्मिक अध्ययन-मनन-चिंतन-सभाषण में ही लगा दी । धीरे-धीरे वे तत्त्व की गहराईयाँ समझने लगीं । न केवल वे स्वयं ही अध्ययन करती, अपितु अपनी साथी बहनों को भी समझातीं । जहाँ शंका होती सेठजी से समाधान कर लेती । ज्यों-ज्यों वे तत्त्व समझती जाती, त्यों-त्यों धार्मिक क्षेत्र में व्याप्त शिथिलाचार की ओर उनका ध्यान जाने लगा । इस प्रकार वर्षों बीत गए । एक दिन सेठजी को विचारमग्न देख सेठानी पूँछती हैं -

सेठानी: आप किन ख्यालों में गुम हैं? आपकी चिंता का कारण क्या है?

सेठजी: भगवान महावीर की निर्ग्रंथ परंपरा में अन्तिम श्रुतकेवली भद्रबाहु के समय जो संघभेद के बीज पड़ गए थे, वे अब दिगम्बर और श्वेताम्बर के दो भेदों के रूपों में स्पष्ट आकार लेने लगे हैं । अब भगवान महावीर के मूलमार्ग की सुरक्षा के लिए दिगम्बर मत का प्रतिपादन और शिथिलता को दूर करने वाले आचार्य की आवश्यकता है ।

सेठानी : हाँ जी, सही कहा आपने! श्रुतकेवली भद्रबाहु के दिवंगत हो जाने के पश्चात् प्रारंभ में उनके शिष्यों में से कुछ शिष्यों में मात्र आहार-विहारादि क्रियाओं में ही शिथिलाचार का समावेश हुआ था किन्तु अब तो वैचारिक मतभेद भी प्रारंभ हो गया है ।

सेठजी : श्रीमती जी कहाँ खोई हो! अब तो आचार-विचार संबंधी शिथिलता दिन-रात तेजी से बढ़ती ही जा रही है । आहार-विहारादि क्रियाओं में कोई मर्यादा ही नहीं रह गई है । साधुजन प्रत्येक शिथिलाचार को आपत्धर्म कहकर पोषण करने लगे हैं । धार्मिक दृढ़ता का तो अभाव ही होता जा रहा है ।

सेठानी : तो फिर इस समय बरती गई किसी भी प्रकार की शिथिलता भगवान महावीर के मूलमार्ग के लिए घातक सिद्ध हो सकती है ।

सेठजी : इसीलिए तो आज तलस्पर्शी, अध्यात्मवेत्ता, प्रखर-प्रशासक, सशक्त, सर्वमान्य, सर्वश्रेष्ठ आचार्य की आवश्यकता है, जो दो उत्तरदायित्व निभा सके ।

सेठानी : मैं समझी नहीं, कौन से दो उत्तरदायित्व की बात कर रहे हैं आप?

सेठजी : एक तो अध्यात्म शास्त्र को लिखित रूप से व्यवस्थित करना और दूसरा शिथिलाचार के विरुद्ध सशक्त आन्दोलन चलाना एवं कठोर कदम उठाना।

सेठानी : उचित कहा आपने! परमागम का यह क्षेत्र खाली ही है। मुक्ति का मूल तो परमागम ही है अत: उसका व्यवस्थित होना आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है। यह कार्य कोई प्रखर बुद्धि वाले आचार्य ही कर सकते हैं। आप किसी आचार्य महोदय से अपनी भावना व्यक्त करें तो.........

सेठजी : पगली! आचार्यों को हम क्या कहेंगे? वे स्वयं समझदार हैं, परिस्थितियों से अवगत हैं, पर मैं यह सोच रहा हूँ कि यदि हमारी संतान हुई तो उसमें शिथिलाचार के विरुद्ध लड़ने के संस्कार हमें बचपन से ही देने होंगे, मुनि....

सेठानी : (बीच में ही) अभी भी आपको पुत्र की आशा है।

सेठजी : अरे! तुझे याद नहीं, महाराज ने क्या कहा था?

सेठानी : मतिवरन तो चला गया। इतने वर्षों से उसकी कुछ सूचना भी नहीं।

सेठजी : आएगा, एक दिन जरूर वह तुम्हारा पुत्र बनकर आएगा, मुनि बनेगा, महान मुनि बनेगा, तत्त्वज्ञान का प्रचार-प्रसार करेगा। महाराज के वचन असत्य नहीं हो सकते। पर तुम अपनी ममता से उसे रोकोगी नहीं।

सेठानी : पुत्र तो होने दो, फिर देखेंगे। अभी **सूत न कपास, जुलाहों में लठालठी।**

सेठजी : नहीं, मुझे वचन दो। मुझे लग रहा है, वह शीघ्र तुम्हारी कोख में आने वाला है।

सेठानी : अच्छा बाबा! मैं उसमें बचपन से ही मुनि बनने की भावना का बीजारोपण करूँगी, शिथिलाचार के विरुद्ध आंदोलन चलाने के संस्कार दूँगी। अब बस, और कुछ..

सेठजी : और कुछ नहीं, आज मैं निश्चिन्त हुआ। चलो विश्राम करते हैं।

दादी : फिर दोनों सोने चले जाते हैं।

दृश्यपरिवर्तन

(कुछ समय पश्चात्)

दादी : कोण्डकुन्दपुर के ग्रामवासी वसंत पंचमी उल्लासपूर्वक मना रहे थे, उसी समय आमोद-प्रमोद करती हुई कुछ महिलाओं से एक महिला आकर कहती है –

प्रथम महिला : अरे! सुनो, सुनो!! करमण्डु श्रेष्ठी के यहाँ लड़का हुआ है।

द्वितीय महिला: अहा! कैसे शुभ मुहूर्त में बालक ने जन्म लिया है।

सभी महिलाएँ: चलो! चलो!! बधाई दे आएँ। (सभी जाती हैं।)

(सभी महिलाएँ श्रीमती के पास पहुंचकर)

सभी : बधाई हो बधाई! श्रीमती!

प्रथम महिला: बहुत सुन्दर है बालक! 'सुन्दर' नाम रखना।

दूसरी : अजी बुढ़ापे का सहारा है 'आश्रय' नाम रखना।

तीसरी : नहीं, नहीं 'विश्वास'..........

चौथी : (बीच में ही) तुम्हीं सब बोलती रहोगी, श्रीमती से भी तो पूँछों? क्या नाम रखा है लाड़ले का?

श्रीमती : पद्म।

प्रथम : क्या मतलब?

श्रीमती : जिस प्रकार कमल जल में रहकर जल से निर्लिप्त रहता है, उसी प्रकार मेरा लाल संसार में रहकर सांसारिक भावनाओं से निर्लिप्त बना रहे इसलिए इसके पिताजी ने उसका नाम 'पद्म' रखा है।

बुजुर्ग महिला:चलो सेठजी ने नाम वैराग्यप्रद रख दिया तो कोई बात नहीं। संस्कार तो तुम्हें ही देने हैं। बेटा! बचपन में दिए गए संस्कार ही जीवनभर काम आते हैं। इसमें तुम ऐसे संस्कार देना ताकि यह बुढ़ापे में तुम्हारी सेवा कर सके। तुम्हारा वंश बढ़ाए, नाम कमाए।

श्रीमती : अम्मा! **सुख-दु:ख अपने पुण्य-पापानुसार ही मिलते हैं।** यदि पुण्य का उदय हो तो पराए भी अपने हो जाते हैं और पाप का उदय हो तो अपने भी पराए। अम्मा मैं इसे ऐसे संस्कार दूँगी ताकि यह जीवनभर मुनि बनकर जिनवाणी माँ की सेवा करे, अध्यात्म का प्रचार-प्रसार करे।

दूसरी महिला: तूँ तो बड़ी निर्मोही हो गई है। इतने वर्षों बाद संतान हुई और अब तुम उसे मुनि बनाना चाहती हो। अपना सुख तो देखो जरा!

श्रीमती : कोई भी माँ अपने बच्चे का हित चाहती है, अपना नहीं। मैं भी माँ हूँ। अपने लाल को सच्चासुख प्राप्त करने की ही शिक्षा दूँगी।

(बच्चा रोने लगता है, माँ लोरी सुनाती है –)

श्रीमती :

रोले-रोले, रोले आज तूँ;
अब ओर नहीं रोना तुझको।
सोले-सोले, सोले आज तूँ;
अब और नहीं सोना तुझको।
मानव भव मिला है तुझको,
जैन कुल मिला है तुझको।

संस्कार देना है मुझको,

सच्चा सुख पाना है तुझको ।

तीसरी महिला: वैराग्य तो बुढ़ापे में..........

बुजुर्ग महिला : रहने दो शांति । अभी उसे आराम करने दो, बाद में कभी चर्चा करना । अभी चलें, बहुत देर हो गई ।

(बाहर निकलकर)

तीसरी महिला: अम्मा! आपने मुझे रोक क्यों दिया?

बुजुर्ग महिला : बेटा ! इतने दिन उसके संतान नहीं थी, उसमें हीनभावना रहने लगी थी । लगता है इसीलिए सेठजी ने उसे संयोगों की असारता और क्षणभंगुरता का ज्ञान कराकर दिलासा दी होगी; वैराग्य की बातें बताई होगी । अभी उसी का असर बोल रहा है । कुछ दिनों में जब बच्चे के साथ रहेगी तो बच्चे का मोह जाग जाएगा, तब समझाओगी, तो तुम्हारी बात का असर होगा । जिसप्रकार समय पर बोआ बीज ही फलदायी होता है उसी प्रकार **उचित समय पर कही गई बातें ही प्रभाव छोड़ती हैं ।**

तीसरी महिला : ठीक है अम्मा! अब मैं चलती हूँ, मेरा घर आ गया ।

(सभी अपने-अपने घर चली जाती हैं)

दृश्यपरिवर्तन

(4 साल पश्चात् पड़ोसनें आपस में बातें करती हैं)

एक पड़ोसन : अम्मा! अभी तक श्रीमती का वही हाल है?

अम्मा : क्या मतलब? समझी नहीं मैं!

पहली पड़ोसन : कुछ दिनों पहले मैंने उससे चर्चा की थी । वह तो अपने बच्चे को पहले जैसी ही वैराग्य की शिक्षा दे रही है ।

दूसरी पड़ोसन : बेटे को कड़े अनुशासन में पाल रही है ।

तीसरी पड़ोसन : बिल्कुल निष्ठुर हो गई है । देख कर लगता ही नहीं उसका ही बेटा है ।

चौथी पड़ोसन : कहाँ तो ग्वाला मतिवरन से पुत्र मोह? और कहाँ अपने बेटे को ही....? जिंदगी भर दु:ख झेलेगी ।

पांचवी : ऐसा बेटा बुढ़ापे में क्या सुख देगा?

पहली : तुम नई हो, इसलिए तुम्हें पता नहीं । वह तो उसे मुनि बनाना

चाहती है मुनि ।

अम्मा : चलो! एक बार उसे और समझाकर देखते हैं ।

दादी : सब मिलकर सेठानी श्रीमती के घर जाती हैं । श्रीमती लोरी गाकर बच्चे को उठा रहीं थी । सब सुनने लगती है –

श्रीमती :

उठजा, उठजा अब तूँ,

भोर हुई मत देर कर तूँ ।

देवदर्शन करने चल तूँ,

मुक्ति पथ पर आगे बढ़ तूँ ।

बेटा ! उठ,उठ ।

ज्ञान सूर्य सा तूँ,चमके नभ में ।

महके वीतरागी फूल, तेरी जीवन बगिया में ।।

दादी : अम्मा वीतरागी शब्द सुनकर श्रीमती को समझाते हुए कहती है -

अम्मा : अरे ! तुम कैसी माँ हो! कितने कठोर अनुशासन में पाल रही हो अपने बेटे को ! अभी उसके खेलने-खाने के दिन है । पहले तो संतान ही न थी, अब हुई तो तुम इतनी कठोर हृदया कैसे हो गई? सब माँ अपने बेटे की शादी की कल्पना करती हैं, पोते-पोती को खिलाना चाहती हैं । एक तुम हो उसे वैराग्य की घुट्टी पिला रही हो । कहीं उसने दीक्षा ले ली, मुनि बन गया तो सौ-सौ आसुँ रोओगी । बुढ़ापे का एक ही तो सहारा है । अभी तुम समझ नहीं पा रही कि तुम्हारी यह वैराग्यप्रद बातें उस नाजुक कोमल मन पर क्या प्रभाव छोड़ेंगी? वह त्यागी बन जाएगा, त्यागी । गृहस्थी में मन न लगेगा उसका । अभी वैराग्य के बीज बोना आसान है, बाद में चाहकर भी उसके कदम पीछे न ला पाओगी, जीवनभर पछताओगी ।

श्रीमती : (मन में) तुम सही समझ रही हो, कि वह त्यागी बनेगा, मुनि बनेगा । यह कदम मैं अच्छी तरह सोच-समझकर ही बढ़ा रही हूँ । पर घर-गृहस्थी में ही सुख समझने वाली तुम मेरी बात अभी समझ न सकोगी! मेरी बात, मेरा मन समझने के लिए तुम्हें सच्चा सुख का स्वरूप समझना जरूरी है। समझाऊँगी बहना ! धीरे - धीरे तुम्हें भी वह सब समझाऊँगी, उसके लाभ दिखाऊँगी । जब मेरा बेटा छोटी उम्र में ही मुनि बनकर आत्मकल्याण के पथ पर चलेगा, तभी तुम मेरी बात सुनोगी, समझोगी आज नहीं । (प्रगट में) बहना! उसका अभी का अनुशासन भविष्य में दृढ़ता की नींव रखेगा,

उसका भविष्य सुखी हो, इसीलिए यह सब कर रहीं हूँ ।

पड़ोसन : ठीक है! जैसा तुम उचित समझो! मुझे समझाने का भाव आया तो तुम्हें समझाया । मुझे लगा कि तुम भूल से अनजाने में यह सब कर रही हो। तुम्हें बच्चे पालने का अनुभव जो नहीं है । मैं तो तुम्हारे भले के लिए ही कह रही थी । धर्म तो जिंदगी भर होता रहता है ।

श्रीमती : नहीं बहना, नहीं! प्रत्येक कार्य सीखने व करने की उम्र होती है । जो कार्य हमें भविष्य में करना है, उसकी शिक्षा बचपन से ही दी जाए तो बच्चा बड़ा होकर सफल होता है । जैसे-राजा अपने बेटे को बचपन से लड़ने की शिक्षा देता है, रानी माँ अपने बेटों को तिलक लगाकर हँसकर युद्ध के लिए विदा करती है, तो मैं धर्म रक्षा के लिए अपने बेटे को हँसकर विदा क्यों नहीं कर सकती? शारीरिक सुख के साधनभूत धन प्राप्ति के लिए व्यापार करने बच्चों को अपने से दूर रख सकते हैं तो आत्मसुख के लिए क्यों नहीं? मेरा बेटा आत्मकल्याण करेगा । महावीर परंपरा चलाएगा । शिथिलता के विरूद्ध आवाज उठाएगा । सच्चे मार्ग का डंका बजाएगा । मैं तो चाहती हूँ कि वह अपने, बुद्धि, विवेक और कौशल से पत्थर को भी वाचाल बना दे ।

पड़ोसन : यह सब करने के लिए उसे त्यागी जीवन जीना पड़ेगा । घर-गृहस्थी में तो यह सब संभव नहीं ।

श्रीमती : हाँ, हाँ, मैं यह जानती हूँ, समझती हूँ । सोच-समझकर ही उसे संस्कार दे रही हूँ ।

पड़ोसन : ठीक है, ठीक है । हम अब चलें । (सभी चली जाती हैं ।)

दृश्यपरिवर्तन

दादी : जब पद्म ६ साल का होता है, तब एक दिन रसोई में खाना बनाते हुए माँ गाती है —

माँ : भगवान बनेगा मेरा लाल ।
मुनिराज बनेगा मेरा लाल ॥
आत्मध्यान करेगा मेरा लाल,
तत्त्व-प्रचार करेगा मेरा लाल ।
मुनिराज बनेगा मेरा लाल ।
भगवान बनेगा मेरा लाल ॥
अनादि से सोया मेरा लाल,
जाग उठ अब मेरा लाल ।

मुनिराज बनेगा मेरा लाल ।
भगवान बनेगा मेरा लाल ॥
मेरी आँखों का तारा तो है ही तूँ,
जग की आँखों का तारा बन तूँ ।
मेरा आशीष तुझे —
'शुद्धात्मा' का ध्यान धरे तूँ,
मिथ्यात्व नष्ट करे तूँ,
स्वानुभूति प्रधान ग्रंथ रचे तूँ,
मुनि सिरमौर बने तूँ ।
जग का आराध्य बने तूँ,
अविनाशीपद प्राप्त करे तूँ ।
भगवान बनेगा मेरा लाल ।
मुनिराज बनेगा मेरा लाल ॥

(पद्म को देखकर) अरे! पद्म कब आया तूँ?

पद्म : जब आप गा रहीं थीं तभी!

माँ : तो बता तूँ क्या बनेगा?

पद्म : वीर सा बनूँगा मैं,
भगवान बनूँगा मैं ।
आत्मध्यान करूँगा मैं,
मुनिव्रत धारूँगा मैं ॥
तत्त्वप्रचार करूँगा मैं,
अपने पथ से नहीं डिगूँगा मैं ।
वीर सा बनूँगा मैं,
भगवान बनूँगा मैं ।

दृश्यपरिवर्तन

दादी : इस प्रकार पद्म की माँ खेल-खेल में, पद्म को तत्त्वज्ञान और आत्मध्यान की प्रेरणा देती रहती है । साल भर पश्चात् एक दिन खेलते हुए पद्म से माँ कहती है —

माँ : पद्म! मैं मंदिर जा रही हूँ ।

पद्म : अम्मा! मैं भी चलता हूँ, कपड़े बदलकर अभी आया ।

(रास्ते में चलते हुए)

पद्म : माँ! आप प्रतिदिन मन्दिर क्यों जाती हैं ?

माँ : देवदर्शन करने ।

पद्म : क्यों?

माँ : जिनदेव के दर्शन से मन को शांति मिलती है, परिणामों में निर्मलता आती है ।

पद्म : और?

माँ : और क्या ? जिनदर्शन से निजदर्शन की प्रेरणा मिलती है । बेटा मंदिर आ गया । मंदिर में पण्डित जी के प्रवचन में तुम भी बैठना ।

(माँ-बेटे दर्शन कर प्रवचन सुनने बैठ जाते है)

पण्डितजी : भगवान जगत की किसी भी वस्तु का कर्त्ता-धर्त्ता नहीं है, मात्र ज्ञाता-दृष्टा ही हैं । भगवान कोई अलग नहीं होते । जो जीव पूर्ण पुरुषार्थ करे, वही भगवान बन सकता है ।

पद्म : पण्डित जी! क्या मैं भी भगवान बन सकता हूँ?

पण्डितजी : क्यों नहीं बेटे? वैसे तो सभी आत्मा स्वभाव से ही भगवान ही हैं और यदि हम अपने को जाने, पहचाने और अपने में ही जम जावे, रम जावे तो आठ वर्ष का बालक भी भगवान बन सकता है ।

पद्म : पण्डित जी, मैं तो अभी सात साल का ही हूँ ।

पण्डितजी : कोई बात नहीं, तुम अभी अभ्यास तो कर सकते हो!

पद्म : पण्डित जी! क्या आठ वर्ष का होने पर मैं भगवान बन जाऊँगा।

पण्डितजी : नहीं बेटा! मात्र आठ वर्ष का होने से भगवान नहीं बन जाते । आठ वर्ष का होने पर तो भगवान बनने की योग्यता होती है । भगवान तो मुनिपद धारण कर ही बना जा सकता है । तुम भी मुनि बनकर सच्चा-सुख प्राप्त करो-ऐसा मेरा आशीर्वाद है ।

पद्म : (मन में) मुनि बनकर ही भगवान बना जा सकता है । पण्डितजी ने अभ्यास करने को कहा है । मैं घर जाकर मुनि बनने का अभ्यास करता हूँ।

दादी : दोनों घर जाते हैं । घर पर जाकर पद्म अपने कपड़े उतारकर आता है ।

पद्म : माँ! माँ!! मैं मुनि बन गया, अब आप मुझे आहार दें ।(माँ उसे कुछ समझाती उससे पूर्व ही सेठजी घर आ जाते हैं ।)

सेठजी : (गुस्से में) यह क्या हो रहा है पद्म की माँ! मैंने तुम्हें किसी भी प्रकार के शिथिलाचार के पोषण के लिए मना किया था । हमें शिथिलाचार का पोषण नाटक

में भी नहीं करना है । बालमन कोमल होता है । उसके संस्कारों में यह बैठ जाएगा कि कभी भी कपड़े उतारो और मुनि बन जाओ । इस समय तुम्हारे द्वारा दिए गए संस्कार ही उसके जीवन की नींव बनेंगे । अत: मज़ाक के रूप में भी कभी उसके झूँठ बोलने की सराहना न करना, छुप-छुपकर बात सुनने की कहकर चोरी को प्रेरित न करना । उसकी तीक्ष्ण बुद्धि और विवेक का प्रयोग आत्मज्ञान में ही होना चाहिए, तत्त्वज्ञान में ही लगना चाहिए। (प्यार से) बेटा पद्म! तेरी भावना अच्छी है । तूँ मुनि बनना, जरूर बनना; पर नकली नहीं, असली मुनि बनना ।

पद्म : पिताजी! मैं अभी असली मुनि बन जाता हूँ ।

पिताजी : नहीं बेटा! तूँ अभी मुनि नहीं बन सकता । पहले तूँ आठ वर्ष का तो हो जा ।

पद्म : आठ वर्ष का क्यों?

पिताजी : क्योंकि आठ वर्ष के पूर्व सम्यग्दर्शन नहीं होता ।

पद्म : सम्यग्दर्शन नहीं होता तो ना सही! पहले मुनि बन जाता हूँ, फिर सम्यग्दर्शन भी कर लूँगा । मुझे सच्चा सुख प्राप्त करना है, मुनि बनना है; मैं मुनि बनूँगा । पण्डितजी ने भी यही कहा था । अभ्यास करना ।

पिताजी : बेटा! अभ्यास का मतलब तत्त्व अभ्यास से है । पहले तूँ मुनि का सच्चा स्वरूप समझ । सम्यग्दर्शन प्राप्त कर । सम्यग्दर्शन की प्राप्ति के लिए आत्मानुभूति अनिवार्य है । सच्चा-सुख प्राप्त करने के लिए सम्यग्दर्शन अनिवार्य है । सम्यग्दर्शन के बिना सच्चा मुनि भी नहीं बना जा सकता है । बेटा! ज्ञान और ध्यान ही ऐसे साधन हैं, जिससे सच्चा सुख प्राप्त किया जा सकता है । जानना ज्ञान है, जानते रहना ध्यान । तुम ज्ञानी बनकर, ध्यानी बनकर सच्चा-सुख प्राप्त करो- ऐसी हमारी भावना है ।

दृश्यपरिवर्तन

दादी : इसके पश्चात पद्म पिताजी व पण्डितजी से चर्चा करता,शंकाओं का समाधान करता । उसके प्रश्नोत्तरों से पण्डितजी प्रसन्न होते । उसकी प्रशंसा प्रवचन में करते । आठ वर्ष का होते-होते तो वह अपने साथी बच्चों की शंकाओं का समाधान करने लगा । ऐसे ही एक दिन एक बालक पद्म से पूँछता है —

बालक : पद्म! एक बात बता! हम सब दु:खी क्यों है ?

पद्म : अपनी भूल से ।

बालक : हमारी भूल क्या है ?

पद्म : अपना सही स्वरूप नहीं जानना ।

बालक : अपना स्वरूप कौन नहीं जानता? सब अपने को जानते हैं । देखो! मेरा नाम कर्मचंद है । मैं आठ साल का हूँ । मेरे पिताजी लक्ष्मीचंद है । इस प्रकार मैं अपने बारे में सब कुछ जानता हूँ । इसी प्रकार सभी अपने-अपने बारे में जानते हैं, अपने रिश्तेदारों को भी पहचानते हैं ।

पद्म : नहीं, यह आत्मा का सही स्वरूप नहीं । तुम आत्मा हो, आत्मा तो अनादि-अनन्त है । फिर तुम आठ साल के कैसे? आठ साल का तो शरीर सहित जीव (मनुष्य पर्याय) की अवस्था है । यहाँ हम ' शरीर ही मैं हूँ ' ऐसा समझते हैं । शरीर में ही हमारी एकत्व बुद्धि है, शरीर से संबंधित माता-पिता आदि में ममत्व बुद्धि..............

दूसरा बालक: (बीच में ही) बातें बहुत हो गई, चलो, चलें । सब बच्चों के साथ खेलते हैं । सभी बच्चे तितलियाँ पकड़ रहे है, हम भी पकड़ते हैं ।

तीसरा बालक: आओ ! आओ !! पद्म तुम भी तितलियाँ पकड़ो । जो सबसे ज्यादा पकड़ेगा, वही जीतेगा ।

पद्म : अरे! नहीं नहीं; उन्हें मत पकड़ो वे मर जाएँगी, तुम्हें पाप लगेगा ।

चौथा बालक: उँह! इसके साथ तो कुछ भी खेलने में मजा नहीं आता ।

तीसरा बालक: हाँ ! हाँ !! न कभी फूल तोड़ने देता है, न दूब पर चलने देता है । बस सभी जगह उसे हिंसा होती नजर आती है । मजाक करने में भी पाप नजर आता है ।

दूसरा बालक: पद्म! तुम्हें न खेलना हो तो न खेलो! हमें तो खेलने दो ।

सभी : (एक साथ) हाँ, हाँ! चलो चलें खेलते हैं ।

दादी : इस प्रकार चर्चा-वार्ता करते, अध्ययन करते, उदासीन वृत्ति से घर में रहते हुए बालक पद्म के दो-तीन वर्ष निकल जाते हैं । पद्म की वैराग्यप्रद बातें अपने बच्चों से सुनकर पड़ोसनों को श्रीमती की नासमझी पर तरस आता है, अत: ग्यारहवें जन्मदिन के कुछ दिन पहले सभी पड़ोसनें मिलती हैं और अम्मा सबसे कहती है —

अम्मा : चलो, श्रीमती के घर चलें । एक बार उसे और समझा लें ।

पहली पड़ोसन:अम्मा! कोई फायदा नहीं । वह अपनी जिद पर अड़ी है ।

अम्मा : वह नासमझ है । घर में कोई बड़ा-बूढ़ा है नहीं । हमें विकल्प है, एक बार पूरा कर लेते हैं ।

दूसरी पड़ोसन: बेकार है जाना! वह अपनी सुनने वाली नहीं है ।

अम्मा : हम अन्तिम कोशिश कर लेते हैं । फिर जिसकी जो होनहार हो । **होता तो वही है, जो होना होता है ।**

तीसरी पड़ोसन: हाँ! हाँ!! गुरुकुल भेजने के बहाने बात कर लेते है । यदि वह तैयार हो गई तो फिर हमारे बच्चों के साथ पद्म को सही राह मिल जाएगी। वह हमारे बच्चों के रंग में रंग जाएगा ।

चौथी पड़ोसन : सही कहा तुमने! बचपन में ही बच्चे माँ की भाषा बोलते हैं । किशोरवय में तो वह दोस्तों की भाषा बोलने लगते हैं ।

दूसरी पड़ोसन : हाँ, हाँ । यह तरीका अच्छा है । चलो चलते हैं ।

(श्रीमती के घर पहुँचकर)

एक पड़ोसन : बहन जी! हम अपने बच्चों को गुरुकुल में पढ़ने के लिए भेज रहे हैं, तुम्हारा क्या विचार है? तुम्हारा पद्म तो बहुत प्रतिभाशाली है ।

दूसरी पड़ोसन : मेरा लाल तो सैन्य कला में प्रवीण होगा, सैनिक बनेगा। देश की रक्षा करेगा ।

श्रीमती : (मन में) मुझे जितना, जो आता था सिखा दिया । सेठजी की शिक्षा भी कुछ दिनों में पूरी हो जाएगी । वसंतपंचमी को वह ग्यारह वर्ष का हो रहा है । किसी आचार्य के पास आगे अध्ययन को भेजना ही होगा ।
(प्रगट में) हाँ, हाँ बहना! सेठजी से सलाह कर भेज देगें । आगे अध्ययन के लिए तो भेजना ही है । विद्वान बनाना ही है ।

तीसरी पड़ोसन : (व्यंग्य से) अरे! तुम तो उसे मुनि बनाना चाहती थी। अब विचार बदल गया क्या?

श्रीमती : बहनजी! मुनिपद जबरदस्ती नहीं थोपा जाता । वैराग्य तो अंदर से पनपता है । वह आंतरिक भावना है । जब उसके अंदर वैराग्य के भाव पनपेंगे, तो मैं उसके वैराग्यपथ में बाधक नहीं बनूँगी । जब तक उसके मुनि बनने का काल नहीं पका है, तब तक..............

नई पड़ोसन : (मुनि शब्द सुनकर बीच में ही) तुम अपने फूल से बच्चे को कठोर मुनिव्रत पालन के लिए अपने से दूर कैसे भेज पाओगी?

श्रीमती : तुम भी तो अपने बच्चे को अपने से दूर गुरुकुल में पढ़ने भेज रही हो ।

पहली पड़ोसन : हाँ, भेज रहे हैं । उनका भविष्य सुखी हो, इसलिए भेज रहे हैं । वे हमेशा के लिए नहीं जा रहे है । वे पढ़कर लौटेंगे, धन कमाएँगे; हमारी सेवा करेंगे । पर तुम तो मुनि बनाकर हमेशा के लिए..........

अम्मा : (बीच में) श्रीमती! यह सही कह रही है, तूँ जरा विचार कर ।

श्रीमती : अम्मा! हम सब एक बड़ी भूल कर रहे हैं । धन-संपत्ति की प्राप्ति ही हमारा साध्य हो गया है, जब कि धन-सपत्ति लौकिक सुख के साधन हैं । पर अम्मा! सोचो तो जरा! जिन राजा-महाराजाओं के पास अपार धन-संपत्ति है, क्या वे सुखी है? नहीं न । अम्मा! मैं भी अपने बच्चे को सुखी देखना चाहती हूँ । मेरी कामना है - वह अलौकिक सुख प्राप्त करे, पारमार्थिक सुख प्राप्त करे। उसके लिए जो कुछ भी करना होगा मैं करूँगी । इसीलिए उसे मैं जिनवाणी माँ की सेवा करने की प्रेरणा दे रही हूँ । इसी में उसका, हमारा-सबका कल्याण है।

दूसरी पड़ोसन : यह सब तो ठीक है, पर क्या इस नाजुक उम्र में तुम उसे मुनि बनने का आशीर्वाद दे पाओगी? तुम्हारे हाथ नहीं कापेंगे? अपने दिल के टुकडे को कठोर तप के लिए कैसे भेज पाओगी?

श्रीमती : जब तुम देशसेवा के लिए अपने बच्चे के प्राण भी खुशी-खुशी न्यौछावर कर सकती हो तो फिर आत्मकल्याण के लिए मैं क्यों बाधक बनूँ?

अम्मा : अभी बहस में मत उलझो । तर्क-वितर्क में श्रीमती को कोई जीत नहीं सकता । इस वसंतपंचमी को हमारे बच्चे गुरुकुल जाएँगे ।

सभी : ठीक है, ठीक है । (सभी चली जाती हैं)

दृश्यपरिवर्तन

दादी : वसंतपंचमी के एक दिन पूर्व की बात है । बालक पद्म घर में स्वाध्याय कर रहा था । तभी उसका एक दोस्त आता है और कहता है —

बालक : पद्म! चलो, जल्दी चलो उद्यान में सब बच्चे तुम्हारा इंतजार कर रहे हैं ।

पद्म : अभी आया ।

(सब बच्चे उद्यान में पहुँचकर खेलने लगते हैं और पद्म पेड़ के नीचे बैठकर सोचने लगता है —)

पद्म : (मन में) इस अमूल्य मनुष्य भव में बाल अवस्था इसी तरह खेलों एवं अविवेकपूर्ण कार्यों में नष्ट हो जाती है । इस नर भव में आत्महित साधना के अवसर हैं । अवसर की पहचान और समय का सदुपयोग ही मनुष्य की सफलता का पहला कदम है । जो यह नहीं जानता असफलता उसकी नियति बन जाती है । मुझे भी समय रहते इस अवसर का सदुपयोग करना......

बालक : पद्म ! पद्म !! (हाथ से हिलाकर) क्या सोच रहे हो? चलो,चलो। उधर

मुनिराज का उपदेश हो रहा है ।

(सब बालक मुनिराज के समीप जा कर उपदेश सुनने लगते हैं ।)

आ. जिनचंद्र : अनन्त सुख का भंडार यह भगवान आत्मा स्वयं को भूलकर सुख की खोज में दर-दर भटक रहा है । सुख के लिए यह विषयों में रमता है, पर इसे कहीं भी सुख-शान्ति प्राप्त नहीं होती । ये विषय सुख वास्तव में सुख नहीं, दु:ख ही हैं, सच्चा सुख तो रत्नत्रय से ही प्राप्त हो सकता है। रत्नत्रय ही मुक्ति का मार्ग है ।

पद्म : (मन ही मन सोचते हुए) अहो! महाराज मुझे भगवान आत्मा कह रहे हैं । मुझे अपने को जानने-पहचानने का प्रयत्न करना चाहिए । मुझे भी मुक्ति के मार्ग पर चलना चाहिए । (प्रगट में) आचार्य जी! मुझे भी जिनदीक्षा दीजिए।

आ. जिनचंद्र: क्या अपने माता-पिता से अनुमति लेकर आए हो?

पद्म : जी नहीं ।

आ. जिनचंद्र: तो जाओ, पहले अपने माता-पिता आदि परिवारजनों से अनुमति ले आओ, बाद में जिनदीक्षा की बात करना ।

दादी : बालक पद्म अपने घर जाता है एवं कुछ सोचता हुआ बैठा रहता है । बालक को गंभीर देखकर पिता उससे पूँछते हैं —

पिता : क्या बात है बेटा? क्या सोच रहे हो?

पद्म : पिताजी ! आज नगर में आ. जिनचंद्र पधारे हैं । मैं अभी उनका उपदेश सुनकर, उनसे व्रत लेकर आया हूँ और अब मैं दीक्षा लेना चाहता हूँ ।

पिता : (बालक की दृढ़ता जांचने हेतु) क्या कहा? दीक्षा!! अभी तो तूँ बालक ही है । तेरे तो अभी खेलने के दिन है । अभी तूँ घर में आनन्द से रह और सुख भोग । तेरे.........

पद्म : (बीच में ही) पिताजी! संसार में सुख है ही कहाँ जो भोगूँ? यदि संसार में सुख होता तो बड़े-बड़े तीर्थंकर-चक्रवर्ती भी दीक्षा क्यों धारण करते?

पिता : बेटा! जरा अपनी माँ का तो ख्याल कर । वह तेरी याद में रो-रोकर अपनी जान दे देगी ।

पद्म : नहीं ! पिताजी! ऐसा नहीं होगा । माँ तो मुझे खुशी - खुशी विदा करेगी; क्योंकि अपने द्वारा बोए बीज को फलता-फूलता देखकर किसान प्रसन्न होते है, दु:खी नहीं । माँ ने जो बीज बोए हैं, यह उनके फलागमन का काल है ।

पिता : (आशीर्वाद देते हुए) ठीक है, बेटा!
अपना संसार सीमित करो तुम,
भगवान बनने का मार्ग प्रशस्त करो तुम।
अविनाशी सुख प्राप्त करो तुम,
शिवरमणी को शीघ्र वरो तुम ।
(इतने में ही माँ कमरे में प्रवेश करती है)

माँ : आज दोनों बाप-बेटे किस चर्चा में उलझे हो?

पिता : तुम इससे ही सुन लो । क्या कह रहा है, तुम्हारा लाड़ला?

माँ : और क्या कहेगा? पूँछ रहा होगा कि - 'सच्चे मुनि का स्वरूप क्या है? वे कैसे होते हैं? उनको आहार कैसे देते हैं?'

पिता : नहीं, अब यह आहार देने की नहीं, किन्तु लेने की बात सोच रहा है।

माँ : अब मज़ाक छोड़ो, चलो भोजन कर लो ।

पद्म : नहीं माँ! पिताजी सच कह रहे हैं । मुझे यह संसार अच्छा नहीं लगता।

माँ : तुम्हारी भावना तो अच्छी है बेटा, पर दीक्षा लेना इतना सरल नहीं । गर्मी-सर्दी में पूर्णत: नग्न दिगंबर होकर रहना आसान बात नहीं है ।

पद्म : इस मध्य लोक में नरकों के बराबर सर्दी-गर्मी तो नहीं है माँ । हमने तो अनन्तों बार...

माँ : (बीच में ही) जानती हूँ बेटे! पर एक बात बता — क्या तूँ निर्जन वन में अकेला रह सकेगा, दृढ़ता से कठोर मुनिधर्म का पालन कर सकेगा । अरे! अभी तेरी उम्र परीषहों को सहने की नहीं है ।

पद्म : माँ! तीन लोक में ऐसा कौन सा स्थान है, जहाँ मैं आजतक नहीं रहा । आपने जिन कष्टों की ओर संकेत किया है, वे सब शरीर में ही हैं, आत्मा से इनका क्या लेना-देना? जब शरीर ही मैं नहीं, तो फिर ये कष्ट कैसे?

माँ : बेटा..........!

पद्म : नहीं, माँ नहीं, अब मत रोको । आज्ञा दो माँ ।
(पद्म माँ के पैर छूता है, माँ आर्शीवाद देती है -)

माँ : (रुंधे कंठ से) जा बेटा! जा आज तूँ,
मुनि बन आत्मकल्याण कर तूँ ।
महावीर परंपरा पर चलना तूँ,
सच्चे पंथ से नहीं डिगना तूँ ।

विरोधों की आंधी आए या तूफान,
पर्वत सा अचल बन बाधा बनना उनकी तूँ ।
(पद्म पिता के पैर छूता है, पिता आर्शीवाद देते हैं -)

पिता : जाओ, जाओ लाल आज तुम जाओ,
वीर परंपरा को आगे बढ़ाओ ।
चली आ रही श्रुतपरंपरा जो,
उसे लिपिबद्ध कर अमर बनाओ ।
अपने ज्ञान का विकास करो तुम,
मुनिराजों के आदर्श बनो तुम ।

दृश्यपरिवर्तन

दादी : माँ, पिता की आज्ञा पाकर ग्यारह वर्षीय बालक आचार्य जिनचन्द्र के पास जिनदीक्षा लेने जाता है । बालक पद्म को सामने नमस्कार करता हुआ देखकर आचार्य मुनिराज पूँछते है —

आ. जिनचंद्र : हे भव्यात्मा! क्या अपने माता-पिता से अनुमति ले आये हो?

पद्म : हाँ महाराज! मैं अपने माता-पिता से अनुमति लेकर ही यहाँ आया हूँ । हे गुरुवर! मैं जानता हूँ कि इस जगत में न कोई मेरा है और न मैं किसी का हूँ, मैं देह-मन-वाणी आदि से भिन्न हूँ । शरीर, सांसारिक सुख-दु:ख, शत्रु-मित्र कुछ भी ध्रुव नहीं हैं, पर मैं तो उपयोगस्वरूप ध्रुव आत्मा हूँ । मैं आपकी शरण में आना चाहता हूँ, आपका अनुगामी बनना चाहता हूँ ।

आ. जिनचंद्र : (बालक पद्म की प्रबल भावनाओं को परखकर ।) तथास्तु।
(सभा में कुछ श्रोता बीच में आपस में वार्ता करने लगते है ।)

एक श्रोता : अहो! इतनी सी उम्र और आत्मा की कैसी लगन! आचार्य महोदय के उपदेश में जादू है जादू ।

दूसरा श्रोता : अरे! बालक के उपादान में वैसी योग्यता थी तभी तो आचार्य का उपदेश उसके वैराग्य में निमित्त बना । हमें-तुम्हें वैराग्य क्यों नहीं आया? हम सभी रोज-रोज उनके उपदेश सुनते हैं ।

तीसरा श्रोता : और नहीं तो क्या? यह बालक संस्कारी है, तत्त्वज्ञानी है । तत्त्वज्ञानी ही उदसीन परणामों के होने से एवं परिषहादि सहन करने में सामर्थ्यवान होने से स्वयमेव मुनि बनना चाहता है ।

चौथा श्रोता : और पूर्व जन्म के संस्कार भी तो है ।

पांचवा श्रोता : देखो तो! इस बालक ने राग के उत्सव वसंतपंचमी को वैराग्यपंचमी बना दिया।

एक गंभीर श्रोता : बातें बाद में करना! मुनिराज के उपदेश सुनो।

आ. जिनचंद्र : वत्स! जो व्यक्ति सम्पूर्ण परिग्रह का त्याग कर देता है और ज्ञाता-दृष्टा रहता हुआ साम्य जीवन बिताने की प्रतिज्ञा करता है, वह जिनदीक्षा का अधिकारी है। आज वसंतपंचमी है, ग्रहण, दुष्टग्रह आदि के उदय का दिन न होने से शुभ दिन भी है और तुममें सब प्रकार की पात्रता है। अत: आज ही तुम समस्त अलंकरणों का त्याग कर निग्रन्थ मुद्रा को धारण करो। (बालक पद्म अपने वस्त्रों का त्याग कर मुनिदीक्षा ग्रहण करते हैं)

आ. जिनचंद्र :(पद्म से) हे भव्य! पूर्व दिशा की ओर मुख कर पद्मासन में बैठकर सिद्ध परमेष्ठी को नमस्कार करते हुए पंचमुष्ठियों से केशलोंच करो।

पद्म : हे गुरुवर! आपकी सबप्रकार की आज्ञा शिरोधार्य है, आपके आदेशानुसार अब मैं विधिवत पंच-महाव्रत, पंच-समिति, तीन-गुप्तियों का पालन करते हुए निर्दोष रूप से मुनि के समस्त धर्मों का पालन करूँगा।

आ. जिनचंद्र : (आशीर्वाद देते हुए) वत्स! तुम्हारा कल्याण हो —

चल पड़ा है आज तूँ मुक्ति पथ पर,
चढ़ गया है आज तूँ आत्मरथ पर।

आज से तुम्हारा नाम पद्मनन्दी रहा, तुम समस्त प्रतिज्ञाओं का पालन करते हुए स्वानुभूति-पूर्वक अनन्त ज्ञानादि स्वरूप शुद्धात्मा की पूर्णता द्वारा मुक्तिरमा का वरण करो।

दादी : कुछ दिनों में ही मुनिराज पद्मनन्दी के कठोर आचरणों की चर्चा घर-घर में होने लगी।

एक महिला : अहो! इतनी छोटी उम्र में ये मुनिराज कैसा निर्दोष मुनिधर्म का पालन कर रहे हैं! धन्य है इनकी ज्ञानगरिमा को। इनके आचरण में किसी भी प्रकार की त्रुटि व शिथिलता नहीं है।

दूसरी महिला : हाँ बहिन! बात तो सही है, ध्यान और अध्ययन के अतिरिक्त उनका मन कहीं और जगह जाता ही नही है।

तीसरी महिला : धन्य है धन्य है वो माँ,
वीर सा लाल जिसने जन्मा।

दादी : इस प्रकार मुनिराज पद्मनन्दी कभी ध्यानरत रहते तो कभी अध्ययनरत। ऐसे

ही वर्षों बीत गए। एक दिन मुनिगणों के मध्य में स्थित पद्मनन्दी को इंगित करते हुए आचार्य जिनचन्द्र ने कहा —

आ. जिनचंद्र : आज वसंतपंचमी है, पद्मनन्दी को दीक्षा ग्रहण किए हुए तैंतीस वर्ष हो गए है। अब मैं अपने आचार्य पद को स्वानुभूति संपन्न दृढ़चारित्र के धनी अध्ययनशील पद्मनन्दी को सौंपकर निवृत होकर निर्भाररूप से आत्मसाधना करना चाहता हूँ।

एक मुनि : (अनुमोदन करते हुए) अद्वितीय प्रतिभा एवं आन्तरिक पवित्रता के धनी मुनि पद्मनन्दी इस पद के सर्वथा योग्य है।

दादी : इसप्रकार अपने जन्मदिन वसंतपंचमी को ही दीक्षा लेने के तैंतीस वर्ष पश्चात् मुनि पद्मनन्दी आचार्य पद पर विराजमान होकर आचार्य पद्मनन्दी कहलाने लगे। एक दिन आचार्य महाराज को आहार देने के पश्चात उनके विषय में एक महिला दूसरी महिला से कहती है —

प्रथम महिला : अहो! धन्य हो गया हमारा जीवन! जो ऐसे सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र के धनी मुनिमहाराज के दर्शन करने का व आहार देने का अपूर्व अवसर प्राप्त हुआ है।

द्वितीय महिला: हाँ बहन, ये मुनिराज चारणऋद्धिधारी हैं, यह जमीन से चार अंगुल ऊपर चलते हैं।

तृतीय महिला: बहन,हमने सुना है कि आचार्य पद्मनन्दी भी तो जमीन से चार अंगुल ऊपर चलते हैं।

चतुर्थ महिला: (हँसकर) अरे! तुम्हें पता नहीं, इन आचार्य पद्मनन्दी का ही दूसरा नाम कुन्दकुन्द है। ये कौण्डकुण्दपुर के रहनेवाले थे। अत: इन्हें ही कुन्दकुन्दाचार्य कहते हैं।

पंचम महिला: क्यों बहन! इन्हीं आचार्य पद्मनन्दी को ही गृद्धपिच्छाचार्य, एलाचार्य एवं वक्रग्रीवाचार्य के नाम से भी पुकारा जाता है न?

चतुर्थ महिला: हाँ, हाँ इन्हीं को।

प्रथम महिला: आचार्य पद्मनन्दी का इन नामों से क्या संबंध है?

चतुर्थ महिला: इस संबंध में मेरे पिताश्री ने मुझे बताया था कि एकबार आचार्य को बहुत अध्ययन करने पर भी कोई ज्ञेय स्पष्ट नहीं हो रहा था, उसी चिन्तन में मग्न आचार्य ने विदेहक्षेत्र में विद्यमान सीमन्धर स्वामी को नमस्कार किया। तब विदेहक्षेत्र में समवशरण में स्थित सीमन्धर भगवान ने आशीर्वाद देते हुए कहा

— 'सद्धर्मवृद्धिरस्तु ।' यह सुनकर सभी मुनि व श्रोतागण मन ही मन विस्मित होते हुए सोचते हैं — 'यह आशीर्वाद किसे दिया गया है?' जवाब स्वरूप सीमन्धर भगवान की दिव्यध्वनि में आया कि यह आशीर्वाद भरत क्षेत्र के आचार्य कुन्दकुन्द को दिया गया है ।

आचार्य कुन्दकुन्द का नाम सुनकर दो चारण ऋद्धिधारी मुनिराज आपस में एक दूसरे से कहते हैं —

प्रथम मुनिराज : अरे यह आशीर्वाद अपने पूर्वजन्म के मित्र कुन्दकुन्द को दिया गया है।

द्वितीय मुनिराज : चलो हम उन्हें ले आएँ ।

प्रथम मुनिराज : हाँ, हाँ चलो । चलते............

द्वितीय महिला : (बीच में ही) तो क्या आचार्य कुन्दकुन्द विदेहक्षेत्र गए थे?

चतुर्थ महिला : हाँ, हाँ गए थे, पूरी बात तो सुनो । जब वे मुनिराज विदेहक्षेत्र जा रहे थे तो रास्ते में उनकी मयूरपिच्छि गिर गई ।

तृतीय महिला : तो क्या वे बिना पिच्छि के रहे?

चतुर्थ महिला : नहीं! बिना पिच्छि के तो आहार-विहारादि क्रियाओं में जीवों की हिंसा होती है अत: उन्होंने उससमय गृद्धपिच्छि का उपयोग किया।

प्रथम महिला : अच्छा-अच्छा इसीलिए उन्हें गृद्धपिच्छाचार्य कहते होंगे?

द्वितीय महिला : उन्हें एलाचार्य क्यों कहते हैं?

चतुर्थ महिला : सीमंधर स्वामी की सभा में उपस्थित सभी मुनियों में ऊंचाई में सबसे छोटे होने के कारण समस्त श्रोतागण उन्हें 'एलाचार्य' कहने लगे ।

द्वितिय महिला : वे वहाँ कितने दिन रहे?

चतुर्थ महिला : आठ दिन ।

प्रथम महिला : उन्होंने आहार किस चीज का लिया?

चतुर्थ महिला : वहाँ उन्होंने आहार नहीं लिया ।

तृतीय महिला : क्यों?

चतुर्थ महिला : क्योंकि जिस समय विदेहक्षेत्र में दिन होता था, उस समय भरतक्षेत्र में रात, अत: उन्होंने आहार नहीं लिया । अब बहुत देर हो गई, चलो चलें ।

द्वितीय महिला : बस इतना तो बताती जाओ कि उन्हें वक्रग्रीवाचार्य क्यों कहते हैं?

एक बच्ची : अरे माँ! चमन अंकल जैसे उनकी भी गर्दन टेढ़ी होगी?

माँ : चुप, महाराज के लिए ऐसा नहीं कहते ।

चतुर्थ महिला : हाँ बहिन, बच्ची सही कह रही है, उसे डांटो मत ।

माँ : इतने बड़े महाराज जी और – –

चतुर्थ महिला : बहिन, ये टेढ़ापन तो शरीर की पर्याय है और वे तो आत्मानुभव के कारण बड़े थे ।

चेतना : दादी! मैंने तो सुना है यह एक बीमारी है ।

विवेक : दादी से क्या पूँछती है? मेरे से पूँछ । इस बीमारी का नाम ***TORTITOLLIS*** है । जो योगा से ठीक हो जाती है ।

ज्ञान : तुम लोग चुप रहो दादी आप तो कहानी सुनाओ । विदेहक्षेत्र से लौटकर उन्होंने क्या किया ।

दादी : विदेहक्षेत्र से लौटने के पश्चात् आचार्य कुन्दकुन्द ने भरतक्षेत्र के तीर्थों की यात्रा प्रारंभ की और स्थल-स्थल पर धर्मोपदेश दिया ।

(उपदेश देते हुए आचार्य कुन्दकुन्द व कुछ श्रोता)

आचार्य : सभी संयोग क्षणभंगुर हैं । संयोगों में सुख खोजना समय व शक्ति का अपव्यय है । सुख की प्राप्ति के लिए तो सुख के सागर निज स्वभाव की शोध-खोज आवश्यक है ।

श्रोता : अच्छा तो महाराज! क्या माता-पिता का संयोग भी दु:खस्वरूप है?

आचार्य : नहीं भाई! तुम समझे नहीं । संयोग सुख-दु:ख स्वरूप नहीं हैं । संयोगों में अपनत्व बुद्धि, ममत्व बुद्धि दु:ख का कारण है ।

श्रोता : इस दु:ख से छूटने का उपाय क्या है?

आचार्य : आत्मा में ही अपनत्व बुद्धि, आत्मा का ध्यान ही दु:खों से छूटने का एकमात्र उपाय है ।

श्रोता : धर्म का मूल क्या है?

आचार्य : धर्म का मूल सम्यग्दर्शन है । दर्शन-ज्ञान सहित-चारित्र से ही मोक्ष होता है। भावरहित नग्नत्व अकार्यकारी है ।

श्रोता : तो क्या नग्न वेष धारण नहीं करना चाहिए?

आचार्य : नहीं भाई! ऐसी बात नहीं है । धर्मात्मा के नग्न वेष तो होता है पर नग्न वेष धारण कर लेने मात्र से कोई धर्मात्मा नहीं बन जाता । धर्म सहित लिंग धारण करने से ही सिद्धि होती है । मात्र वेष धारण करने से नहीं । साधुका रूप जैसा बालक जन्मता है, वैसा ही नग्न होता है । यदि वह तिलतुषमात्र भी परिग्रह रखे तो निगोद का ही पात्र है । दिगम्बर जैनदर्शन में तीन वेष हीमान्य है-

(1) नग्न दिगम्बर साधु (2) उत्कृष्ट श्रावक, (क्षुल्लक, ऐलक) और (3) आर्यिका।

दादी : इसप्रकार आ.कुन्दकुन्द के धर्मोपदेश से प्रेरित होकर अनेकों व्यक्तियों ने यथाशक्ति श्रावक के व्रतों को धारण किया, अनेकों ने मुनिदीक्षा ली।

चेतना : मैंने तो सुना है कि उन्होंने कोई वाद-विवाद भी जीता था, पत्थर को भी वाचाल बना दिया था।

दादी : हाँ, सही सुना है। एक बार घूमते हुए जब वे गिरनार पहुँचे तब वहाँ उनका विरोधियों के साथ विवाद हुआ। इस अवसर पर अंबिकादेवी ने प्रगट होकर कहा कि निर्ग्रन्थ दिगम्बर मार्ग ही सच्चा है।

इस विवाद से आचार्य कुन्दकुन्द को यह पूर्ण विश्वास हो गया कि यदि अभी सिद्धान्तों को लिपिबद्ध नहीं किया जाएगा तो कालान्तर में ये विकृत आचार एवं विचार परंपरायें ही भगवान महावीर के नाम पर प्रचलित हो जायेगी। अत: भगवान महावीर के मूल मार्ग की सुरक्षा के लिए उन्होंने मूलभूत सिद्धान्तों को लिपिबद्ध करने का निश्चय किया।

तदनन्तर पोन्नूर पहुँचकर उन्होंने समयसारादि ग्रन्थों की रचना की।

अन्त में अपने शिष्य उमास्वामी को आचार्य पद प्रदानकर समाधिस्थ हो 95 वर्ष 10 माह 15 दिन की दीर्घायु प्राप्त कर वे दिवंगत हो गए। इसप्रकार हम देखते हैं कि वे ८४ वर्ष १० माह १५ दिन मुनि अवस्था में रहे। अच्छा तो अब तुम बताओ कि............

चेतना : (बीच में ही) दादी! मैं समझ गई, मेरा जवाब मिल गया। आचार्य कुन्दकुन्द ने अपने जन्मदिन के दिन ही दीक्षा ली थी, और जन्मदिन के दिन ही उन्हें आचार्य पद मिला था।

विज्ञान : दादी! मैं भी समझ गया। **वसंतपंचमी ही वैराग्यपंचमी है,** क्योंकि इसी दिन 12 वर्षीय बालक पद्म ने दीक्षा ली थी और इसी दिन 33 वर्ष की उम्र में उन्हें आचार्य पद मिला था।

ज्ञान : (ताली बजाकर) गलत, सब गलत। बालक पद्म ने 12 वर्ष में नहीं, 11 वर्ष की उम्र में मुनिदीक्षा ली थी और दीक्षा के 33 वर्ष पश्चात् अर्थात् 44 वर्ष की उम्र में उन्हें आचार्य पद मिला था। इस प्रकार वे 51 वर्ष १० माह १५ दिन आचार्य पद पर विराजमान रहे।

विवेक : दादी! मुझे कहानी पढ़ने का बहुत शौक है। यह कहानी किस पुस्तक में है?

दादी : ज्ञानप्रबोध, आराधना कथाकोश और पुण्यास्त्रवकथाकोष में उनकी कहानी मिलती है। मैंने तुम्हें पुण्यास्त्रवकथाकोष के आधार पर सुनाई है।

विवेक : क्या मतलब? क्या अलग-अलग किताबों में यह कहानी अलग-अलग रूप में मिलती है?

दादी : मूल कहानी और घटनाएँ तो सभी में समान है, पर हाँ नामों के बारे में कुछ भिन्नता मिलती है। अच्छा अब बताओ इस कहानी से तुम क्या सीखे?

ज्ञान : बालक हो तो पद्म जैसा।

आराधना : जन्म दिन मनाएँ तो पद्मकुमार जैसा।

चेतना : हम अच्छे कार्य करेंगें तो अच्छा फल उदय में आएगा। **हम जैसे परिणाम करेंगे वैसा फल हमें मिलेगा।** ग्वाला ने अच्छे कार्य किए उत्तम फल मिला।

संस्कृति : आप चाहे कुछ भी कहें मैं तो कहूँगी - यह सब तो **संस्कार का चमत्कार** है।

-o-o-o-o-o-o-o-

परिचय

बाल साहित्य के उत्कृष्ट लेखन हेतु पं. टोडरमल पुरस्कार से सम्मानित विद्वत्‌रत्न डॉ. शुद्धात्मप्रभा टडैया को सम्प्रति ८ मार्च २००८ को महिला दिवस के अवसर पर मुम्बई की महापौर के शुभ कर कमलों से सम्मानित किया गया। प्रसिद्ध विद्वान् डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल की आप सुयोग्य ज्येष्ठ पुत्री हैं। आपका जन्म अशोकनगर (म.प्र.) में ३० जनवरी १९५८ को हुआ।

आपने बी.ए. (ऑनर्स) संस्कृत में स्वर्णपदक प्राप्त किया।

आपके द्वारा एम.ए. में लघुशोधनिबंध के रूप में लिखी गई आ. अमृतचन्द्र और उनका पुरुषार्थसिद्ध्युपाय नामक पुस्तक मात्र १९ वर्ष की अवस्था (२७ नवम्बर १९७७) में प्रकाशित हो गई।

आपने 'आ. कुन्दकुन्द और उनकी टीकाकार : एक समालोचनात्मक अध्ययन' विषय पर शोधकर राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर से पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त की है। आपने अपने शोध ग्रन्थ में शोध समीकरणों को ध्यान में रखते हुए आ. कुन्दकुन्द के ग्रन्थों और टीकाकारों का सर्वांगीण शोधपरक विवेचन सरल-सुबोध भाषा में प्रस्तुत किया है जो कि विद्वत्-जन और बुद्धिजीवी वर्ग के साथ-साथ जनसामान्य को भी अपनी ओर आकृष्ट करता है।

आधुनिक बाल जैन साहित्य की प्रणेता आपने जैन सिद्धान्तों को सर्वप्रथम पहेलियों के रूप में प्रस्तुत कर जैन बाल साहित्य को नई दिशा प्रदान की है।

आपके द्वारा लिखी गई बाल पुस्तकों में पहेलियों, कविताओं और प्रश्नोत्तर शैली में लिखे गए पाठों के माध्यम से तत्त्वज्ञान एवं भेदविज्ञान कराया गया है। अद्यावधि जैन समाज में प्रचलित अन्य पाठ्यपुस्तकों से

भिन्न शैली, रंगीन, चित्रमय प्रस्तुति एवं मूल तत्त्वज्ञान का समावेश – इन पुस्तकों की विशिष्ट पहचान है।

आपने विभिन्न आयुवर्ग को ध्यान में रखकर भिन्न-भिन्न शैलियों में अध्यात्म को जन-जन तक पहुँचाने का प्रयास किया है। गद्य-शैली, पद्य-शैली, चम्पू (गद्य-पद्य मिश्रित) शैली, पत्रशैली, डायरीशैली, छोटे-छोटे मंचन योग्य नाटक, बड़े-बड़े नाटक आदि साहित्य की विभिन्न विधायों के दर्शन आपकी कृतियों में होते हैं।

आपकी सभी कृतियाँ अध्यात्मरस से सराबोर और भेद-विज्ञान से ओतप्रोत हैं। सरलता आपकी कृतियों की सबसे बड़ी विशेषता है। कलरफुल चित्रों के माध्यम से रोचक प्रस्तुति और आकर्षक आधुनिक भाषा-शैली में सर्वप्रथम लिखी गई आपकी बाल पुस्तकें मील का पत्थर साबित हुई हैं।

सम्प्रति वह अपने परिवार के साथ मुम्बई में रहती हैं। जहाँ आपके पति का हीरे-जवाहरात एवं डायमंड ज्वैलरी का व्यवसाय है। मुम्बई में आप आध्यात्मिक प्रवचन करती ही हैं, तथा शिक्षण-प्रशिक्षण शिविरों में आपके द्वारा बालकों और युवाओं के लिए विशेष कक्षाओं का आयोजन किया जाता है, जिसमें सभी कम समय में अधिक से अधिक तत्त्वज्ञान प्राप्त करते हैं।

आपके निर्देशन में युवाओं के लिए देशभर में art of happy living नाम से सेमीनार कम वर्कशॉप का आयोजन भी किया जाता है, जिसमें युवाओं को stress free, tension free जीवन जीने के तरीके बताए जाते हैं।

लेखिका की कृतियाँ

शिशु वर्ग :- (१) जैन नर्सरी (हिन्दी, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती, तमिल) (२) जैन के.जी. भाग-१ (हिन्दी, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती, तमिल) (३) जैन के.जी. भाग-२ (हिन्दी, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती, तमिल) (४) जैन के.जी. भाग-३ (हिन्दी, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती, तमिल) (५) जैन कलर बुक भाग-१ (ड्राइंग बुक) (६) जैन कलर बुक भाग-२ (ड्राइंग बुक)।

बाल वर्ग :- (१) जैन जी.के. भाग-१ (हिन्दी, अंग्रेजी), (१) जैन जी.के. भाग-२ (हिन्दी, अंग्रेजी), (३) जैन जी.के. भाग-३ (हिन्दी, अंग्रेजी), (४) जैन जी.के. भाग-४ (हिन्दी, अंग्रेजी) (५) चलो पाठशाला : चलो सिनेमा भाग-१ (नाटक), (६) चला पाठशाला : चलो सिनेमा भाग-२ (नाटक), (७) सीखें हम : गाते गाते।

किशोर वर्ग :- (१) जैन जी.के. भाग-५, (२) जैन जी.के. भाग-६, (३) जैन जी.के. भाग-७, (४) जैन जी.के. भाग-८, (५) जैन जी.के. भाग-९, (६) जैन जी.के. भाग-१०, (७) आगम प्रवेश भाग-१, (८) आगम प्रवेश भाग-२, (९) आगम प्रवेश भाग-३, (१०) शब्दों की रेल, (११) मुझमें भी एक दशानन रहता है (१२) संस्कार का चमत्कार (कहानी) (१३) राम कहानी (१४) विचार के पत्र : विकार के नाम

सभी वर्ग :- (१) तलाश : सुख की, (२) मुक्ति की युक्ति, (३) सत्ता का सुख, (४) प्रमाणज्ञान, (५) जैन दर्शनसार, (६) आचार्य अमृतचन्द्र और उनका पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, (७) आचार्य कुन्दकुन्द और उनके टीकाकार : एक समालोचनात्मक अध्ययन, (८) एक संभावना यह भी, (९) आत्मानुभूति कैसे?? (१०) नयचक्र गाईड।

गेम :- (१) नोटाईमपास (२) लगे रहो... जीवराज! (३) हमारी लाईफ। **कुल -३६।**

हमारे यहाँ प्राप्त महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजी स्वामी के प्रवचन
प्रवचनरत्नाकर भाग १ से ११ तक/नयप्रज्ञापन
दिव्यध्वनिसार प्रवचन/समाधितंत्र प्रवचन
मोक्षमार्ग प्रवचन भाग-१,२,३,४/ज्ञानगोष्ठी
श्रावकधर्मप्रकाश/भक्तामर प्रवचन
सुखी होने का उपाय भाग १ से ८ तक
वी.वि. प्रवचन भाग १ से ६ तक/कारणशुद्धपर्याय
डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रकाशन
समयसार(ज्ञायकभावप्रबोधिनि)/समयसार का सार
समयसार अनुशीलन सम्पूर्ण भाग १ से ५
प्रवचनसार (ज्ञायज्ञेयप्रबोधिनि)/प्रवचनसार का सार
प्रवचनसार अनु. भाग-१ से ३/णमोकार महामंत्र
चिन्तन की गहराईयाँ/सत्य की खोज/बिखरे मोती
बारह भावना : एक अनुशीलन/धर्म के दशलक्षण
बालबोध भाग १,२,३/तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग १,२
वी.वि. पाठमाला भाग १,२,३/ध्यान का स्वरूप
आत्मा ही है शरण/सूक्तिसुधा/आत्मानुशासन
पं. टोडरमल व्यक्तित्व और कर्तृत्व/तत्त्वार्थमणि प्रदीप
सिद्धभक्ति/भगवान महावीर और उनकी जन्मभूमि
नियमसार कलश पद्यानुवाद
४७ शक्तियाँ और ४७ नय/रक्षाबन्धन और दीपावली
तीर्थंकर भगवान महावीर और उनका सर्वोदय तीर्थ
भ. ऋषभदेव/प्रशिक्षण निर्देशिका/आप कुछ भी कहो
क्रमबद्धपर्याय/दृष्टि का विषय/गागर में सागर
पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव/जिनवरस्य नयचक्रम्
पश्चात्ताप/मैं कौन हूँ/मैं स्वयं भगवान हूँ/अर्चना
मैं ज्ञानानन्दस्वभावी हूँ/महावीर वंदना (कैलेण्डर)
णमोकार एक अनुशीलन/मोक्षमार्ग प्रकाशक का सार
रीति-नीति/गोली का जवाब गाली से भी नहीं
समयसार कलश पद्यानुवाद/योगसार पद्यानुवाद
कुन्दकुन्दशतक पद्यानुवाद/शुद्धात्मशतक पद्यानुवाद
पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल के प्रकाशन
जान रहा हूँ देख रहा हूँ/जम्बू से जम्बूस्वामी
विदाई की बेला/जिन खोजा तिन पाईयां
ये तो सोचा ही नहीं/अहिंसा के पथ पर
सामान्य श्रावकाचार/षट्कारक अनुशीलन
सुखी जीवन/विचित्र महोत्सव/यदि चूक गये तो
संस्कार/इन भावों का फल क्या होगा

अन्य प्रकाशन
मोक्षशास्त्र/चौबीस तीर्थंकर महापुराण
बृहद जिनवाणी संग्रह/रत्नकरण्डश्रावकाचार
समयसार/प्रवचनसार/क्षत्रचूड़ामणि
समयसार नाटक/मोक्षमार्ग प्रकाशक
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका भाग-२ (पूर्वार्द्ध+उत्तरार्द्ध) एवं भाग३
बृहद द्रव्यसंग्रह/बारसाणुवेक्खा
नियमसार/योगसार प्रवचन/समयसार कलश
तीनलोकमंडल विधान/ज्ञानस्वभाव ज्ञेयस्वभाव
आचार्य अमृतचन्द्र : व्यक्तित्व और कर्तृत्व
पंचास्तिकाय संग्रह/सिद्धचक्र विधान
भावदीपिका/कार्तिकेयानुप्रेक्षा/मोक्षमार्ग की पूर्णता
परमभावप्रकाशक नयचक्र/पुरुषार्थसिद्ध्युपाय
इन्द्रध्वज विधान/धवलासार/द्रव्य संग्रह
रामकहानी/गुणस्थान विवेचन/जिनेन्द्र अर्चना
सर्वोदय तीर्थ/निर्विकल्प आत्मानुभूति के पूर्व
कल्पद्रुम विधान/तत्त्वज्ञान तरंगणी/रत्नत्रय विधान
नवलब्धि विधान/बीस तीर्थंकर विधान
पंचमेरु नंदीश्वर विधान/रत्नत्रय विधान
जैनतत्त्व परिचय/करणानुयोग परिचय
आ. कुन्दकुन्द और उनके टीकाकार
कालजयी बनारसीदास/आध्यात्मिक भजन संग्रह
छहढाला (सचित्र)/शीलवान सुदर्शन
जैन विधि-विधान/क्या मृत्यु अभिशाप है?
चौबीस तीर्थंकर पूजा/चौसठ ऋद्धि विधान
जैनधर्म की कहानियाँ भाग १ से १५ तक
सत्तास्वरूप/दशलक्षण विधान/आ. कुन्दकुन्ददेव
पंचपरमेष्ठी विधान/विचार के पत्र विकार के नाम
आचार्य कुन्दकुन्द और उनके पंच परमागम
परीक्षामुख/मुक्ति का मार्ग/युगपुरुष कानजीस्वामी
अलिंगग्रहण प्रवचन/जिनधर्म प्रवेशिका
वीर हिमाचलतैं निकसी/वस्तुस्वातंत्र्य
समयसार : मनीषियों की दृष्टि में/पदार्थ-विज्ञान
व्रती श्रावक की ग्यारह प्रतिमाएँ/सुख कहाँ है ?
भरत-बाहुबली नाटक/अपनत्व का विषय
सिद्धस्वभावी ध्रुव की ऊर्ध्वता/अष्टपाहुड़
शास्त्रों के अर्थ समझने की पद्धति